गलातियों

मसीही विश्वासियों के लिए "गलातियों" नामक बाइबॅल-पुस्तक का एक अध्ययन

GALATIYON

First Hindi Edition : August-2008

Translated into Hindi by	:	**J.P. Pandey**
Assisted by	:	**R.K. Khullar**

This book is based on the English title "Lessons in Galatians for Growing Believers" (Tim Mcmanigle) published by the Fellowship Bible Church, 3217, Middle Road, Winchester, VA. 22602 (U.S.A.).

Copyright © The Fellowship Bible Church,
Winchester, VA. (U.S.A.).

All rights reserved

Printed in Nepal

विषय सूची

अध्याय	पृष्ठ संख्या
एक	5—10
दो	11—16
तीन	17—22
चार	23—27
पांच	28—31
छः	32—36
सात	37—43
आठ	44—47
नौ	48—52
दस	53—59

गलातियों

नामक

बाइबॅल-पुस्तक का एक संक्षिप्त अध्ययन

1

यह पत्री संत पौलुस ने **नया नियम** काल के **गलातिया** क्षेत्र की कलीसियाओं को लिखी थी। गलातिया क्षेत्र की कलीसियाओं का **प्रेरितों के काम** नामक पुस्तक में भी उल्लेख किया गया है। गलातिया क्षेत्र में, सबसे पहले पौलुस और बरनाबास ने ही, पौलुस की प्रथम मिषनरी यात्रा के दौरान सुसमाचार सुनाया था। शुरू में पौलुस और बरनाबास साइप्रस नामक द्वीप गये और वहां से **पिरगा** होते हुए गलातिया क्षेत्र में प्रवेश किये। वहां से पिसिदियाई **अन्ताकिया** गए जहां कुछ लोगों ने प्रभु पर विश्वास किया, लेकिन बहुतों ने विश्वास नहीं किया। इसलिए पौलुस और बरनाबास अपनी यात्रा में आगे बढ़ते हुए इकुनियुम, लुस्त्रा और दिरबे में सुसमाचार प्रचार किए। इस प्रकार पौलुस और बरनाबास ने अपनी प्रथम मिशनरी यात्रा के दौरान पिसिदियाई अन्ताकिया, इकुनियुम, लुस्त्रा और दिरबे नामक गलातिया क्षेत्र के चार मुख्य स्थानों में सुसमाचार प्रचार किया। दिरबे में सुसमाचार–शिक्षा देने के बाद, वे उसी रास्ते से पुनः लौट गए जिससे दिरबे तक आए थे। अपनी वापसी यात्रा के दौरान उन्होंने विश्वास करने वालों से पुनः भेंट की, शिक्षा दी और उन नई मंडलियों में **प्राचीनों** (आत्मिक अगुवों) को नियुक्त किया। संभवतः इन्हीं मंडलियों को पौलुस ने अपनी यह पत्री भेजी (देखेंः इस पुस्तक के साथ छपा नक्शा तथा प्रेरित0 13:1–52; 14:1–23)।

गलातिया की मंडलियों को पौलुस ने यह पत्री जिस कारण से लिखी, वह बहुत ही महत्वपूर्ण है। पौलुस के समय में मसीह को अपना

उद्धारकर्ता मानने का दावा करने वाला यहूदियों का एक समूह यह सिखा रहा था कि मसीह पर विश्वास करने वाले ग़ैरयहूदी परमेश्वर के समक्ष तभी ग्रहणयोग्य होंगे जब ख़तना कराएं तथा इस्राएल को दी गई **पुराना नियम** की सारी धर्म–विधियों का पालन करें (प्रेरित0 15:1)। ये झूठे शिक्षक पौलुस से नफरत करते थे, क्योंकि वह 'मसीह यीशु पर विश्वास मात्र' से उद्धार पाने की शिक्षा देता था। पौलुस द्वारा सुसमाचार–शिक्षा देने के बाद जहां कहीं नये विश्वासियों का झुंड एकत्रित होता था वहां ये झूठे शिक्षक यह सिखाने पहुंच जाते थे कि पौलुस सच्चा प्रेरित नहीं है; उसका संदेश यीशु मसीह की ओर से नहीं बल्कि मनुष्य के दिमाग की उपज है (प्रेरित0 13:45; 14:2, 19; 17:5, 13; 18:12; 20:1, 19; 21:27; 23:12; 25:7)। अतः जब पौलुस को इन झूठे शिक्षकों की चाल का पता लगा और गलातिया की मंडलियों में ऐसी शिक्षा के कुप्रभाव की जानकारी हुयी, तब उसने यह पत्री लिखी। पौलुस यह समझता था कि ऐसी झूठी शिक्षा विश्वासियों को अपनी युक्ति व शक्ति द्वारा मसीही जीवन जीने का वह जोश दिलाती है जिसका परिणाम हताशा व निराशा है; क्योंकि मसीही जीवन मानुषिक भक्ति, शक्ति या युक्ति (शारीरिकता) द्वारा संभव नहीं है।

"पौलुस प्रेरित – जो न मनुष्यों की ओर से, न मनुष्य द्वारा नियुक्त हुआ, परन्तु यीशु मसीह और परमेश्वर पिता के द्वारा जिसने यीशु को मृतकों में से जीवित किया – और सब भाइयों की ओर से जो मेरे साथ हैं, गलातिया की कलीसिया को" (गला0 1:1–2)। परमेश्वर का प्रेरित होने के बारे में यहूदियों द्वारा उसके विषय में कुप्रचार से अवगत, पौलुस, अपनी इस पत्री के प्रारम्भ में ही इस बात को सुस्पष्ट कर देता है कि वह सचमुच में परमेश्वर का प्रेरित है जिसे किसी मनुष्य ने नहीं

बल्कि स्वयं प्रभु यीशु मसीह ने नियुक्त किया है (प0 कुरि0 15:1–8)। दमिश्क के समीप यीशु मसीह ने स्वयं को उस पर प्रकट किया था। उस प्रभु–दर्शन के समय वह "भूमि पर गिर पड़ा" था और अन्धा हो गया था। तत्पश्चात् अपने दास हनन्याह को भेजकर प्रभु ने उसे पुनः दृष्टि–दान दिया था, क्योंकि पौलुस उसका "चुना हुआ पात्र" था (प्रेरित0 9:15–16)। गलातिया क्षेत्र के लोगों के लिए यह जानना बहुत जरूरी था कि पौलुस परमेश्वर का सच्चा प्रेरित है; क्योंकि तभी वे उसके संदेश को परमेश्वर का सत्य–संदेश मानते।

"हमारे पिता परमेश्वर और प्रभु यीशु मसीह की ओर से अनुग्रह और शांति मिले, जिसने हमारे पापों के लिए अपने आप को दे दिया कि हमारे परमेश्वर और पिता के इच्छानुसार, हमें इस वर्तमान बुरे युग से छुड़ा ले। उसकी महिमा सदा–सर्वदा होती रहे। आमीन" (गला0 1:3–5)! चूंकि यहूदी लोग उद्धार–प्राप्ति के लिए पुराना नियम काल की व्यवस्था व धर्म–विधियों के पालन की अनिवार्यता सिखा रहे थे, इसलिए प्रेरित पौलुस यहां इस सच्चाई की याद दिलाता है कि पिता परमेश्वर ने अपने अनुग्रह से मसीह यीशु को भेजा और केवल वही हमारे पापों के बदले मृत्यु–दण्ड सहकर हमारे लिए उद्धार–मार्ग सुनिश्चित किया तथा परमेश्वर के समक्ष हमें ग्रहणयोग्य बनाया – यह सब सिर्फ परमेश्वर के अनुग्रह की देन है। पुराना नियम काल के इस्राएलियों की मिस्र में दासता इस आध्यात्मिक सच्चाई की एक भौतिक तस्वीर जैसी है। वे इस्राएली लोग मिस्र की गुलामी से छुटकारा पाने के लिए स्वयं कुछ नहीं कर सकते थे – वे लाचार व असमर्थ थे। परमेश्वर ने छुटकारा दिलाने वाला नियुक्त करके उनके पास भेजा और उन्हें दासता से छुड़ाया। इसी प्रकार हम भी स्वयं को मुक्ति देने में असमर्थ थे। इसीलिए परम पिता परमेश्वर

ने यीशु मसीह को भेजकर हमें पाप, सांसारिकता एवं शारीरिकता से हमारे छुटकारे का पूर्ण प्रबन्ध किया। इस्राएलियों के कर्म–प्रयास उन्हें मिस्र की गुलामी से छुटकारा नहीं दे सकते थे। हमारे कर्म–प्रयास भी हमें उद्धार प्रदान करने में असमर्थ हैं (इफि0 2:1–9)।

"मुझे आश्चर्य होता है कि परमेश्वर जिसने तुम्हें मसीह के अनुग्रह से बुलाया उसे तुम इतने शीघ्र किसी अन्य ही सुसमाचार के लिए त्याग रहे हो। वास्तव में दूसरा सुसमाचार तो है ही नहीं, परन्तु कुछ लोग हैं जो तुम्हें विचलित कर रहे हैं और मसीह के सुसमाचार को बिगाड़ना चाहते हैं" (गला0 1:6–7)। पौलुस ने कहा कि वह आश्चर्यचकित है कि सुसमाचार सुनने के बाद वह लोग इतनी जल्दी एक भिन्न प्रकार के संदेश के पीछे हो लिए हैं जो सच्चा सुसमाचार नहीं बल्कि झूठी शिक्षा है। पौलुस उन्हें समझाता है कि सच्चे सुसमाचार से मुंह मोड़ना, परमेश्वर से दूर होना है, क्योंकि यह सुसंदेश प्रभु परमेश्वर का संदेश है। स्मरण रहे, पौलुस की इस बात का मतलब यह नहीं है कि गलातिया के लोग उद्धार के सुसमाचार को नहीं सुनना चाहते थे, बल्कि पौलुस यहां 'पवित्रीकरण' की बात कर रहा था (गला0 3:3)। अर्थात् जिस प्रकार उद्धार केवल ईश्वरीय अनुग्रह की देन है, उसी प्रकार पवित्रीकरण भी परमेश्वर के अनुग्रह की देन है (पवित्रीकरण का अर्थ है – 'ईश्वरीय उपयोग के लिए अलग किया जाना'। यह एक विकास–प्रक्रिया की ओर इशारा करता है)।

"परन्तु हम या कोई स्वर्गदूत भी उस सुसमाचार को छोड़ जो हमने तुम को सुनाया है, कोई अन्य सुसमाचार तुम्हें सुनाए तो शापित हो। जैसा हम पहले कह चुके हैं, वैसा ही अब मैं फिर से कहता हूँ : जो सुसमाचार तुम ने स्वीकार किया है यदि उसके विपरीत कोई सुसमाचार

तुम्हें सुनाए तो वह शापित हो" (गला0 1:8–9)। यहां पौलुस बड़ी स्पष्टता से कहता है कि यदि कोई व्यक्ति यह सिखाता है कि उद्धार या पवित्रीकरण परमेश्वर के अनुग्रह के अलावा अन्य किसी तरीके से मिलता है तो "वह शापित" है। वह इस बात को दोहराते हुए बलपूर्वक कहता है कि ऐसा जन "शापित" है। इस प्रकार पौलुस ने परमेश्वर के 'सच्चे सुसमाचार' की महत्ता पर बल दिया है।

"क्या अब मैं मनुष्यों की कृपा प्राप्त करना चाहता हूँ या परमेश्वर की? या मैं मनुष्यों को प्रसन्न करने का प्रयास कर रहा हूँ? यदि मैं अब तक मनुष्यों को प्रसन्न करने का प्रयत्न करता रहता तो मैं मसीह का दास न होता" (गला0 1:10)। इसके बाद पौलुस इस तथ्य पर गंभीरतापूर्वक विचार करने का आग्रह करता है कि वह किसको प्रसन्न करने का प्रयास कर रहा है – मनुष्यों को या परमेश्वर को। जवाब स्वयं देता है कि यदि वह मनुष्यों को खुश करने में लगा है तो वह 'मसीह का सेवक' नहीं है, क्योंकि सेवक तो अपने स्वामी को खुश रखना चाहता है। इसलिए, यदि पौलुस मनुष्यों को खुश करने में लगा है तो मसीह के बजाय वह मनुष्यों का सेवक बन बैठा है। इस संदर्भ में प्रेरितों के काम के बीसवें अध्याय के इन पदों पर ध्यान दें: *"उसने मिलेतुस से इफिसुस को संदेश भेज कर कलीसिया के प्राचीनों को अपने पास बुलवाया और जब वे उसके पास आए तो उसने उनसे कहा: 'तुम स्वयं जानते हो कि पहिले दिन से ही जब मैंने एशिया में पैर रखे किस प्रकार मैं तुम्हारे साथ सब समय रहा – अर्थात् किस प्रकार बड़ी दीनता के साथ, आंसू बहा बहा कर और उन परीक्षाओं में भी, जो यहूदियों के षडयंत्र के कारण मुझ पर आ पड़ी थीं, प्रभु की सेवा करता रहा; और कि मैं किस प्रकार तुम्हारे लाभ के लिए कोई भी बात बताने से न झिझका और सब के सामने तथा*

घर घर जाकर तुम्हें उपदेश देता रहा। मैं यहूदी तथा यूनानी दोनों को ही दृढ़तापूर्वक साक्षी देता रहा कि परमेश्वर की ओर मन फिराओ और प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास करो" (प्रेरित0 20:17–21)। इन पदों की शब्दावली यह नहीं दर्शाती कि पौलुस मनुष्यों को खुश करने में लगा था।

"भाइयों, मैं चाहता हूं कि तुम यह जान लो कि जो सुसमाचार मैंने तुमको सुनाया था वह मनुष्य का सा नहीं। क्योंकि वह मुझे किसी मनुष्य से प्राप्त नहीं हुआ, न किसी ने मुझे उसकी शिक्षा दी, परन्तु वह मुझे यीशु मसीह के प्रकाशन द्वारा प्राप्त हुआ" (गला0 1:11–12)। गलातिया के लोगों को पौलुस यह समझा रहा था कि उसके द्वारा जो सुसमाचार उन्हें मिला था, वह सुसमाचार–संदेश किसी मनुष्य के दिलो–दिमाग से पैदा हुआ संदेश नहीं था। पौलुस को वह सुसमाचार किसी मनुष्य से या किसी मनुष्य की शिक्षा द्वारा नहीं मिला था। स्वयं प्रभु यीशु मसीह ने पौलुस को यह प्रकाशना प्रदान की थी। यही संदेश पौलुस द्वारा गलातिया के लोगों को दिया गया था। अतः मसीह यीशु द्वारा पौलुस को दिए गये परमेश्वर के अनुग्रह के संदेश का परित्याग करना, मसीह को त्यागने समान था।

2

यहूदी पृष्ठभूमि के झूठे शिक्षकों द्वारा पौलुस की प्रेरिताई, उसके सुसमाचार संदेश तथा उसकी ईश्वरीय सेवकाई के बारे में कुप्रचार के कारण इस पत्री के प्रारम्भिक पद में ही पौलुस इस सच्चाई को सुस्पष्ट कर दिया कि वह 'मसीह का चुना हुआ' प्रेरित है (गला0 1:1)। भ्रामक शिक्षा देने वाले यहूदी यह भी सिखा रहे थे कि पौलुस मनुष्य द्वारा सिखाए–पढ़ाए संदेश का प्रचार कर रहा है और उसका सुसमाचार परमेश्वर की ओर से नहीं है। उनके इस कुप्रचार का भी पौलुस ने स्पष्ट खंडन किया (गला0 1:11–12)। यह झूठे शिक्षक अपनी बातों के पक्ष में (यरूशलेम की मंडली के) प्रेरितों को अपना समर्थक बताने लगे थे और पौलुस के सुसमाचार–प्रचार को यरूशलेम की मंडली में दी जाने वाली शिक्षा के विपरीत बता रहे थे।

इन सभी झूठे आरोपों को अस्वीकार करते हुए, संत पौलुस ने अपने मन–परिवर्तन से पहले के जीवन का ज़िक्र किया – *"यहूदी धर्म में मेरे पूर्व आचरण के विषय में तुम सुन चुके हो कि मैं परमेश्वर की कलीसिया पर अत्यधिक अत्याचार करता और उसे नष्ट करने का प्रयत्न किया करता था। मैं यहूदी धर्म में अपनी अवस्था के समकालीन देशवासियों से अधिक प्रगति कर रहा था तथा अपने पूर्वजों की परम्परा का पालन करने में अति उत्साही था"* (गला0 1:13–14)। अपने ग़ैरमसीही जीवन के बारे में लिखकर पौलुस ने यह सुस्पष्ट किया कि मसीह यीशु का वह इतना बड़ा विरोधी था कि इस (मसीही) संदेश को किसी मनुष्य की ओर से कभी भी ग्रहण नहीं करता। अपने मन–परिवर्तन

से पूर्व वह यहूदी धर्म का "अत्यन्त उत्साही" एवं कट्टर अनुयायी था और अब उसके जीवन में यह क्रांतिकारी परिवर्तन भी इस सच्चाई का एक ठोस प्रमाण था कि पौलुस ने इस संदेश को किसी मनुष्य की ओर से नहीं बल्कि प्रभु की ओर से ही पाया।

"परन्तु परमेश्वर, जिसने मुझे माता के गर्भ ही से नियुक्त किया और अपने अनुग्रह से मुझे बुलाया, जब उसकी महान कृपा हुई कि अपने पुत्र को मुझ में प्रकट करे कि मैं गैरयहूदियों में उसका सुसमाचार सुनाऊं, तब मैंने तुरन्त किसी मनुष्य से परामर्श नहीं किया, और न मैं उनके पास गया जो मुझ से पहले यरूशलेम में प्रेरित नियुक्त हुए थे, परन्तु पहिले मैं अरब को चला गया, और वहां से दोबारा फिर दमिश्क को लौट आया" (गला0 1:15–17)। इसमें कोई संदेह नहीं कि पौलुस परम प्रधान परमेश्वर की सर्वसत्ता को मानता था और उसी में विश्वास–विश्राम करता था। वह कहता है कि प्रभु परमेश्वर ने उसे उसकी "माता के गर्भ" से ही मसीह यीशु के लिए चुन कर अलग किया और ग़ैरयहूदियों में सुसमाचार की शिक्षा देने हेतु नियुक्त किया। यहां संत पौलुस इस सच्चाई को बड़ी स्पष्टता से व्यक्त करता है कि केवल पिता परमेश्वर के अनुग्रह ने ही उसे बुलाया, बचाया व पवित्र किया है और सुसमाचार प्रचार के लिए भेजा है। वह यह भी बताता है कि अपने मन–परिवर्तन के तुरन्त बाद वह यरूशलेम के मसीहियों के पास नहीं बल्कि "अरब" चला गया था। उसके कहने का मतलब यह है कि वह यरूशलेम में प्रेरितों द्वारा नहीं, बल्कि बियावान में मसीह यीशु द्वारा सिखाया गया। अब यहां एक रोचक प्रश्न खड़ा हो सकता है कि पौलुस को प्रशिक्षित करने हेतु प्रभु परमेश्वर ने दूसरे मसीही विश्वासियों को क्यों नहीं इस्तेमाल किया? इसका एक अत्यन्त संभावित जवाब यह हो सकता है कि 'मसीह के साथ विश्वासी

जन की आत्मिक पहचान या एकता' सम्बन्धी ईश्वरीय सच्चाईयां तब तक किसी अन्य पर प्रकट नहीं की गई थीं। यह सच्चाईयां सबसे पहले पौलुस पर ही प्रकट की गईं। आगे चलकर यह सुस्पष्ट हो जाता है कि प्रभु परमेश्वर ने इन सच्चाईयों को पौलुस द्वारा अन्य प्रेरितों को सिखाया।

"फिर मैं तीन वर्ष पश्चात् कैफा से भेंट करने यरूशलेम गया और उसके साथ पंद्रह दिन तक रहा। परन्तु प्रभु के भाई याकूब के अतिरिक्त किसी अन्य प्रेरित से नहीं मिला। परमेश्वर मेरा साक्षी है कि जो कुछ मैं तुम्हें लिखता हूँ उसमें कुछ भी असत्य नहीं" (गला0 1: 18–20)। परमेश्वर–प्रदत्त प्रकाशना एवं अपनी प्रेरिताई को प्रमाणित करते हुए पौलुस पुनः स्पष्ट करता है कि यह सब किसी मानवीय स्रोत अथवा अन्य प्रेरितों की देन नहीं है। यह सब उसे परमेश्वर की ओर से मिला। बेशक, तीन साल बाद वह पतरस और याकूब से मिलने गया तथा पंद्रह दिन उनके साथ रहा। *"इसके पश्चात् मैं सीरिया और किलिकिया के क्षेत्रों में गया। उस समय तक यहूदिया की कलीसियाओं ने जो मसीह में हैं मुझे देखा ही नहीं था, परन्तु सुना करती थीं कि जो पहिले हम पर अत्याचार किया करता था वह अब उस मत का, जिसे उसने नष्ट करने का प्रयास किया था, प्रचार करता है, और वे मेरे कारण परमेश्वर की महिमा कर रही थीं"* (गला0 1:21–24)। पतरस के साथ केवल पंद्रह दिन व्यतीत करने के पश्चात् वह सीरिया चला गया था। यहां पौलुस यह भी कहता है कि तब तक यहूदिया क्षेत्र की अन्य कोई मंडली उसे नहीं जानती थी। हां, उसके मन–परिवर्तन के बारे में उन्होंने सुना था और इसके लिए वे प्रभु की प्रशंसा कर रहे थे कि अब उसके जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आ चुका है और वह परमेश्वर से प्राप्त सुसमाचार की शिक्षा दे रहा है।

"चौदह वर्ष पश्चात् मैं बरनाबास के साथ पुनः यरूशलेम को गया और तीतुस को भी साथ ले गया। मैं ईश्वरीय प्रकाशन के फलस्वरूप वहां गया, और जो सुसमाचार मैं ग़ैरयहूदियों में प्रचार किया करता हूं वही मैंने उनके समक्ष प्रस्तुत किया, परन्तु गुप्त रूप से केवल प्रतिष्ठित लोगों को, कि कहीं मेरी इस समय की या पिछली दौड़–धूप व्यर्थ न हो जाए" (गला0 2:1–2)। पौलुस अपनी इस बात को पुनः स्पष्ट करता है कि उसके सुसमाचार–संदेश का स्रोत मनुष्यों का ज्ञान नहीं, बल्कि परमेश्वर–प्रदत्त प्रकाशना है। अपने मन–परिवर्तन के समय से लगभग सत्रह वर्ष बाद तक उसने केवल पंद्रह दिन का समय ही अन्य प्रेरितों के साथ बिताया। यहां पौलुस के शब्दों पर ध्यान दें: "मैं ईश्वरीय प्रकाशना के अनुसार वहां गया"। अर्थात् परमेश्वर की प्रकाशना एवं अगुवाई के अनुसार वह पुनः यरूशलेम गया। प्रभु परमेश्वर द्वारा ग़ैरयहूदियों के मध्य पौलुस को एक खास सेवा सौंपी गई थी। गैरयहूदियों के मध्य ऐसी सेवा अन्य किसी प्रेरित को नहीं दी गई थी। इतना ही नहीं, पौलुस को अनुग्रह का एक ऐसा संदेश प्रदान किया गया था जो तब तक अन्य लोगों को नहीं मिला था। यदि पौलुस यरूशलेम में रह रहे प्रेरितों को बताए बगैर परमेश्वर से प्राप्त अनुग्रह के संदेश का प्रचार करता रहता तो इससे गलतफहमी एवं विभाजन पैदा होता। इसीलिए पौलुस को प्रभु परमेश्वर से अगुवाई मिली कि यरूशलेम जाकर अन्य प्रेरितों को यह संदेश बताने हेतु उनसे भेंट–मुलाकात करे।

"परन्तु किसी ने तीतुस को जो मेरे साथ था यूनानी होने पर भी ख़तना कराने के लिए विवश नहीं किया। यह उन झूठे भाइयों के कारण ही हुआ जो चोरी से घुस आए थे कि हमारी उस स्वतंत्रता का जो मसीह यीशु में हमें प्राप्त है, भेद लेकर हमें दास बनाएं। हमने एक क्षण के लिए भी उनकी अधीनता स्वीकार न की, कि सुसमाचार की सच्चाई तुम में बनी रहे"

(गला0 2:3–5)। गलातिया के विश्वासियों को यहूदी रीति–रिवाजों के व्यवस्था–बंधन में फंसाने के इच्छुक प्रचारक यह भ्रम पैदा कर रहे थे कि यरूशलेम में रह रहे शेष प्रेरितगण पौलुस के अनुग्रह–संदेश के बजाय उनकी (भ्रामक) शिक्षा से सहमत हैं। इसीलिए पौलुस के यरूशलेम जाने पर जो कुछ हुआ था, वह सब गलातिया के विश्वासियों के लिए पौलुस यहां स्पष्ट करता है। पौलुस बिल्कुल स्पष्ट कर देता है कि उन झूठे शिक्षकों द्वारा प्रचारित यहूदियत की रीति–विधियों के बंधन से न तो वह सहमत था, न तीतुस सहमत था और न ही अन्य कोई प्रेरित सहमत था। मसीही जीवन आदि से अन्त तक केवल ईश्वरीय अनुग्रह द्वारा विश्वास के आधार पर ही व्यतीत किया जा सकता है। इस प्रकार पूर्णतः अनुग्रह–आधारित सुसमाचार संदेश सुरक्षित रहा।

"परन्तु वे लोग जो प्रतिष्ठित समझे जाते थे, उनसे मुझे कुछ न मिला – वे कैसे थे इसका मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, परमेश्वर किसी का पक्षपात नहीं करता" (गला0 2:6)। पौलुस अपनी ईश्वरीय प्रेरिताई एवं सुसमाचार संदेश के समर्थन में यह भी स्पष्ट करता है कि उसकी बात को सुनने के बाद यरूशलेम के प्रेरितों ने उसके सुसंदेश में कुछ भी नहीं जोड़ा। उसके अनुग्रह–संदेश से वह सब पूर्णरूपेण सहमत थे।

"इसके विपरीत जब उन्होंने देखा कि जैसा पतरस को ख़तना किए हुए लोगों में, वैसा ही मुझे ख़तना–रहित लोगों में सुसमाचार का कार्य सौंपा गया – क्योंकि जिसने पतरस द्वारा ख़तना वालों में प्रेरिताई का कार्य प्रभावपूर्ण रीति से किया उसी ने मुझ से भी ग़ैरयहूदियों में प्रभावशाली कार्य करवाया – जब उन्होंने उस अनुग्रह को पहिचाना जो मुझे दिया गया था, तो याकूब, कैफा और यूहन्ना ने, जो कलीसिया के

स्तम्भ समझे जाते थे, मुझे और बरनाबास को संगति का दाहिना हाथ दिया कि हम ग़ैरयहूदियों में, और वे ख़तना वालों में, कार्य करें" (गला0 2:7–9)। अन्य प्रेरितगण, पौलुस के सुसमाचार–संदेश को जानने–सुनने के बाद, उसमें कुछ जोड़ने–घटाने के बजाय इस तथ्य के प्रति और कायल हो गए कि परमेश्वर ने उसे ग़ैरयहूदियों में "मसीह के द्वारा मेल–मिलाप की सेवा" दी है; जैसे कि पतरस, यूहन्ना और याकूब को यहूदियों के मध्य सेवा–दायित्व दिया है (दू0 कुरि0 5:18)। अतः अन्य जातियों के मध्य पौलुस और बरनाबास की सेवकाई से अन्य प्रेरितगण पूर्णतः सहमत थे और वे पौलुस के संदेश एवं सेवा–कार्य को परमेश्वर की इच्छा–योजना के रूप में ग्रहण किए।

"उन्होंने हम से केवल यही आग्रह किया कि निर्धनों की सुधि लें। इसी कार्य को करने के लिए मैं भी उत्सुक था" (गला0 2:10)। अन्य प्रेरितों ने पौलुस से एक ही आग्रह किया कि "निर्धनों की सुधि लें।" उस समय यरूशलेम की मंडली पर अविश्वासी यहूदियों द्वारा बहुत उत्पीड़न एवं अत्याचार किया जा रहा था, इसीलिए वहां के विश्वासीगण तमाम आवश्यकताओं से ग्रसित (घटी–कमी का) जीवन व्यतीत कर रहे थे। पौलुस के प्रत्युत्तर पर ध्यान दें : वह स्वयं ऐसे लोगों की सेवा–सहायता करने का इच्छुक था। प्रभु परमेश्वर की स्तुति हो कि उसने प्रारम्भिक कलीसिया में अपने अनुग्रह–संदेश का संरक्षण किया। उस समय, यदि यरूशलेम की मंडली के प्रेरितगण, पौलुस के सत्य–संदेश के बजाय यहूदी रीति–विधियों के बंधन में बांधने वाले झूठे शिक्षकों का पक्ष लिए होते, तब तो 'मसीह द्वारा क्रूस पर पूर्ण किए गए महाकार्य' पर भरोसा रखकर परमेश्वर के अनुग्रह के अधीन जीवन जीने के बजाय आज हम व्यवस्था की रीति–विधियों को ही पूरा करने के (असफल) प्रयास में लगे रहते।

3

"जब कैफा अंताकिया आया तो मैंने उसके सामने उसका विरोध किया, क्योंकि वह दोषी था। क्योंकि याकूब के यहां से कुछ लोगों के आने से पूर्व, वह ग़ैरयहूदियों के साथ भोजन किया करता था, परन्तु जब वे आये तो ख़तना वालों के दल के भय से वह पीछे हटने और किनारा करने लगा। शेष यहूदियों ने भी इस कपट में उसका साथ दिया, यहां तक कि बरनाबास भी लोगों के कपट के कारण बहक गया" (गला0 2:11–13)। **प्रेरितों के काम** की पुस्तक के अनुसार सबसे पहले पौलुस को ही इस ईश्वरीय इच्छा–योजना की प्रकाशना दी गई कि परमेश्वर के अनुग्रह से उपलब्ध उद्धार (यहूदियों के साथ–साथ ग़ैरयहूदियों के लिए भी है (प्रेरित0 9:15)। इसके बाद, प्रेरितों के काम के दसवें अध्याय के अनुसार, यही सत्य पतरस को भी दर्शाया गया। इसीलिए जब पौलुस ने यरूशलेम में अन्य प्रेरितों से भेंट करके अपना सुसमाचार–संदेश बताया, तब पतरस ने इस सत्य का पूर्ण समर्थन किया कि परमेश्वर के अनुग्रह द्वारा विश्वास से उद्धार अन्य जातियों के लिए भी उपलब्ध है। अंताकिया जाने पर पतरस ने शुरू में ग़ैरयहूदी पृष्ठभूमि के (मसीही) विश्वासियों के साथ भोजन किया और उनसे सम्पर्क रखा। कुछ समय बाद, जब यरूशलेम से यहूदी पृष्ठभूमि के (मसीही कहलाने वाले) कुछ लोग वहां आए तब उसने ग़ैरयहूदी पृष्ठभूमि के विश्वासियों से कतराते हुए उनके साथ भोजन–सम्पर्क बन्द कर दिया। पतरस यह जानता था कि परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य होने के लिए (मसीह के विश्वासियों को) यहूदी व्यवस्था का पालन करना जरूरी नहीं था। परन्तु यरूशलेम से अंताकिया आए हुए यहूदी आगन्तुक (जो स्वयं को मसीह के विश्वासी कह रहे थे)

अभी भी यहूदियों की पुरानी रीति–विधियों के बंधन में थे, और पतरस उन्हें नाखुश करने से भयभीत था। इसलिए पतरस उनके वहां रहते हुए व्यवस्था की विधियों को मानने वाले जैसा व्यवहार करने लगा। पतरस प्रारम्भिक कलीसिया का एक प्रमुख प्रेरित एवं अगुवा था। मंडली के बहुत से लोग उसके जीवन–व्यवहार को एक उदाहरण समझते थे। अतः जब उसने व्यवस्था के रीति–रिवाज़ों को पुनः मानना शुरू किया तो अन्य लोग भी वही करने लगे – यहां तक कि बरनवास भी।

"परन्तु यह देख कर कि वे लोग सुसमाचार के सत्य के अनुसार आचरण नहीं कर रहे हैं तो सब के सामने मैंने कैफा से कहा, 'जब तुम यहूदी होकर ग़ैरयहूदियों के सदृश आचरण करते हो और यहूदियों की तरह नहीं, तो ग़ैरयहूदियों को यहूदियों की तरह आचरण करने के लिए क्यों विवश करते हो'" (गला0 2:14)? अब पौलुस की बात का इशारा यह है कि उन यहूदियों को खुश करने के लिए पतरस ने व्यवस्था–पालन का दिखावा करके पाखंडी जीवन–आचरण पेश किया, न कि मसीह के सुसमाचार के अनुसार आचरण। मसीही सुसमाचार का संदेश बिल्कुल स्पष्ट है कि मनुष्य का उद्धार ईश्वरीय अनुग्रह मात्र से है और अनुग्रह मात्र से ही पवित्रीकरण भी। परन्तु पतरस ने अपने जीवन–व्यवहार से ऐसा दिखाया जैसे कि मसीह के विश्वासीगण यहूदी व्यवस्था–पालन से पवित्र हो सकते हैं, क्योंकि उन यहूदी आगन्तुकों के समक्ष उसने ऐसा आचरण किया जैसे कि वह यहूदी व्यवस्था के अनुसार जीवन जी रहा हो। इस प्रकार उसका यह व्यवहार सुसमाचार के विरुद्ध था। इतना ही नहीं, बल्कि विश्वास में नए एवं दुर्बल लोगों के समक्ष ऐसा अनुचित उदाहरण प्रस्तुत करके उन्हें भी इसी राह पर चलने के परीक्षा–प्रलोभन की ओर ले जा रहा था।

जिनमें सत्य की सुस्पष्ट समझ नहीं होती और जो पवित्र आत्मा के अनुसार जीवन व्यतीत करने का अर्थ नहीं जानते, वे मसीही जीवन व्यतीत करने के लिए अक्सर दूसरों के उदाहरण की ओर देखते हैं। अतः यदि हम अपने पुराने मनुष्यत्व (शारीरिकता) और व्यवस्था के अनुसार जीवन बिताते हैं तो हमारे उदाहरण का अनुसरण करने वाले भी ऐसा ही करेंगे। जब पतरस ने सुसमाचार के विरुद्ध आचरण किया, तब वहां के सब विश्वासियों ने देखा, और कुछ लोग उसके जैसा अनुचित आचरण करने लगे। अतः सब को सत्य की ओर वापस लाने के लिये (अर्थात् सारी मंडली की भलाई के लिए) पौलुस ने पतरस के इस व्यवहार की सार्वजनिक भर्त्सना की (प0 तीमु0 5:20)।

"हम तो जन्म से यहूदी हैं, पापी ग़ैरयहूदियों में से नहीं। हम जानते हैं कि मनुष्य व्यवस्था के कामों से नहीं परन्तु मसीह यीशु पर विश्वास करने से धर्मी ठहराया जाता है। इसी कारण हमने भी मसीह यीशु पर विश्वास किया है कि हम व्यवस्था के कामों से नहीं, परन्तु मसीह पर विश्वास करने से धर्मी ठहराए जाएं, क्योंकि व्यवस्था के कामों से कोई भी मनुष्य धर्मी नहीं ठहराया जाएगा" (गला0 2:15–16)। यहां पौलुस यह लिखता है कि परमेश्वर के समक्ष कोई व्यक्ति व्यवस्था के कामों के द्वारा नहीं बल्कि मसीह पर विश्वास के द्वारा ही धर्मी ठहराया जाता है। चाहे यहूदी हो या गैरयहूदी, "व्यवस्था के कामों से कोई भी मनुष्य धर्मी नहीं ठहराया जाएगा"। व्यवस्था सिर्फ हमारे 'पापीपन' को प्रकट कर सकती है; परमेश्वर के समक्ष निर्दोष, धर्मी या ग्रहणयोग्य नहीं ठहरा सकती। व्यवस्था हमें पवित्र जीवन व्यतीत करने की सामर्थ्य भी नहीं दे सकती (रोमि0 3:20)। चूंकि हम सब पाप–स्वभाव लेकर पैदा हुए हैं (रोमि0 5:12), इसलिए व्यवस्था के कामों को पूरा करने के प्रयास में लगे (विश्वासी) लोगों को अन्ततः असफलता ही हाथ लगेगी।

"अतः हम जो मसीह में धर्मी ठहराए जाने की खोज कर रहे हैं, यदि स्वयं ही पापी निकलें तो क्या मसीह पाप का सेवक है? कदापि नहीं" (गला0 2:17)। जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि धार्मिकता (उद्धार) सिर्फ मसीह पर विश्वास के द्वारा ही उपलब्ध है, व्यवस्था के कर्मों द्वारा नहीं। मसीह पर विश्वास से उद्धार पाने के बाद, शारीरिकता में और व्यवस्था की अधीनता में जीवन व्यतीत करना (पुराने मनुष्यत्व के) पाप–स्वभाव में जीवन जीना है (या यूं कहें कि ऐसा करना पाप है)। जब विश्वासीजन व्यवस्था के अधीन जीवन जीता है तो व्यवस्था उसके पापीपन को भड़काएगी और बेपर्द करेगी। तब ऐसा प्रतीत हो सकता है जैसे कि मसीह पाप से छुटकारा देने के बजाय हमें पाप में गिराने आया हो (रोमि0 7:5,15)। अतः व्यवस्था के अधीन जीने का मतलब है – 'मसीह में उपलब्ध आध्यात्मिक आशिषों' से अपरिचित रहना और उद्धार नहीं पाए लोगों की तरह शारीरिकता का जीवन व्यतीत करना।

"जिसको मैं एक बार नष्ट कर चुका हूं, यदि उसे फिर बनाता हूं तो स्वयं को अपराधी प्रमाणित करता हूं" (गला0 2:18)। चूंकि मसीह मे ंपाप का दंड–मूल्य चुकाया जा चुका है, इसलिए हम व्यवस्था के प्रति मर चुके हैं। अब "मसीह में" व्यवस्था हमें दोषी नहीं ठहरा सकती, क्योंकि मसीह ने उन सब पापों के बदले मृत्यु दंड सहा जिनके लिए व्यवस्था दोषी ठहराती। यदि हम अविश्वास के कारण 'मसीह के साथ अपनी पहचान' (एकता) को नहीं अपनाते और पुनः व्यवस्था–पालन की कोशिश में लगते हैं, तो अपने आप को फिर से पाप का दोषी (पापी) बनाते हैं। इस प्रकार जब हम स्वयं को 'मसीह के साथ क्रूसित, मृतक और पुनरुत्थान–प्राप्त' अर्थात् नया जीवन पाए, उद्धार–प्राप्त व्यक्ति के रूप में नहीं जानते–समझते तो पाप के अधिकार–सत्ता के बहकावे के अधीन जीते हैं। यदि हम व्यवस्था के अधीन शारीरिकता के अनुसार

जीवन बिताएंगे, तो व्यवस्था द्वारा पाप के दोषी ठहराए जाएंगे। तब हम 'मसीह में' प्राप्त छुटकारे के आनन्द–अनुभव से वंचित रहेंगे।

"क्योंकि व्यवस्था के द्वारा मैं व्यवस्था के लिए मर गया कि परमेश्वर के लिए जीवित रह सकूं" (गला0 2:19)। हम व्यवस्था के लिए मर चुके हैं (रोमि0 7:4)। व्यवस्था धार्मिकता की मांग करती है। व्यवस्था समस्त पाप को दंडित करने की मांग करती है (रोमि0 8:1)। हमारे एवज़ी (प्रतिस्थापन्न) के तौर पर मसीह यीशु ने व्यवस्था की मांग को पूर्णरूपेण चुकता (पूरा) कर दिया है। अतः व्यवस्था हमें दोषी ठहराने के बजाय क्षमा–दान देने के लिए बाध्य है (रोमि0 8:4)। "मसीह में" या मसीह द्वारा पूर्ण किए गए विमोचन कार्य के कारण अब व्यवस्था का हमारे ऊपर कोई अधिकार नहीं रहा। अब विश्वासीजन पवित्र आत्मा की सामर्थ्य के द्वारा परमेश्वर के लिए जीने हेतु स्वतंत्र है।

"मैं मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया हूं। अब मैं जीवित नहीं रहा, परन्तु मसीह मुझ में जीवित है, और अब मैं जो शरीर में जीवित हूँ, तो केवल उस विश्वास से जीवित हूं जो परमेश्वर के पुत्र पर है, जिसने मुझसे प्रेम किया और मेरे लिए अपने आप को दे दिया" (गला0 2:20)। इस पद पर ध्यानपूर्वक चिंतन करें। पौलुस कहता है : "मैं मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया हूँ"। यहां प्रयुक्त "**मैं**" हमारे "पुराने मनुष्यत्व" को दर्शाता है जो मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया जा चुका है (रोमि0 6:6)। इसीलिए लिखा है कि अब **मैं** (पुराना मनुष्यत्व) जीवित नहीं रहा। पौलुस आगे लिखता हैः "मसीह मुझ में जीवित है, और अब **मैं** जो ...जीवित हूं"। यहां प्रयुक्त "**मैं**" हमारे **नये मनुष्यत्व** को दर्शाता है (दू0 कुरि0 5:17)। सभी विश्वासियों के जीवन के लिए परमेश्वर का यही अंतिम उद्देश्य है – अर्थात् हमारे जीवन में 'मसीह के जीवन' का पुनरुत्पादन

या निर्माण (कुलु0 1:27)। अतः ध्यान दें – अब **मैं** नहीं, **मसीह** मुझ में। हम जिस वक्त मसीह में उपलब्ध उद्धार को पाए, उसी वक्त **मसीह में** स्थापित कर दिए गये (प0 कुरि0 1:30)। स्मरण रहे कि जब मसीह क्रूस पर चढ़ाया गया तो (परमेश्वर की दृष्टि में) उसके साथ हम भी क्रूस पर चढ़ाए गए। अब पवित्र आत्मा हमारे जीवन को (हमारे नवजीवन के स्रोत) मसीह के स्वभाव में ढाल रहा है (दू0 कुरि0 3:18)। गलातियों के उपर्युक्त पद में पौलुस यह भी लिखता है: "अब मैं ...केवल उस विश्वास से जीवित हूं जो परमेश्वर के पुत्र पर है"। हमारी यह देह जब तक जीवित है तब तक हम "मसीह में" अपनी स्थापना से प्राप्त आत्मिक अधिकार–आशिषों एवं मसीह द्वारा पूर्ण किए गए कार्य पर विश्वास के सहारे जीवन व्यतीत करते हैं।

"मैं परमेश्वर के अनुग्रह को व्यर्थ नहीं ठहराता, क्योंकि यदि धार्मिकता व्यवस्था के द्वारा मिल सकती तो मसीह का मरना व्यर्थ होता" (गला0 2:21)। अन्ततः पौलुस इस पद में बिल्कुल स्पष्ट कर देता है कि व्यवस्था–पालन द्वारा धार्मिकता (निर्दोषता) पाने की बात निरी मूर्खता है। अपने सुकर्मों के आधार पर धार्मिकता पाने की बात करना (मसीह की विमोचक मृत्यु एवं पुनरुत्थान द्वारा प्रकट) परमेश्वर के अनुग्रह का तिरस्कार करना है। यदि मानवीय धर्म–कर्म द्वारा मनुष्य का धर्मी ठहराया जाना सम्भव होता तब तो मसीह की मृत्यु (बलिदान) अकारण और बेमतलब साबित होती।

4

गलातियों की पत्री के पहले दो अध्यायों में पौलुस ने यह प्रमाणित किया है कि उसका सुसमाचार परमेश्वर–प्रदत्त संदेश है। अब तीसरे अध्याय में गलातिया के विश्वासियों से वह यह कहता है कि वे अपने प्रारम्भिक विश्वास से विचलित हो गये हैं। *"अरे निर्बुद्धि गलातियों, किसने तुम्हें मोह लिया? तुम्हारी आंखों के सामने यीशु मसीह तो क्रूस पर चढ़ाया हुआ प्रदर्शित किया गया था"* (गला0 3:1)। शारीरिकता में जीवन व्यतीत करने पर आध्यात्मिक सत्य को पहचानने की क्षमता जाती रहती है (प0 कुरि0 2:14)। गलातिया क्षेत्र के विश्वासियों को पौलुस यह याद दिलाया कि वह लोग अनुग्रह के सुसमाचार को सुनने, समझने तथा उस पर विश्वास करने के द्वारा उद्धार पाये थे, परन्तु अब किसी के जाल–फरेब व धोखे में आ गये थे।

उन्हें सत्य की ओर पुनः वापिस लाने हेतु पौलुस ने चार प्रश्न किए: *"मैं तुम से केवल इतना ही जानना चाहता हूं कि तुम ने आत्मा को क्या व्यवस्था के कामों से पाया, अथवा सुसमाचार को विश्वास सहित सुनने से? क्या तुम इतने निर्बुद्धि हो कि आत्मा से आरम्भ करके अब देह की विधि द्वारा पूर्णता तक पहुंचोगे"* (गला0 3:2–3)। उसका पहला प्रश्न है – "क्या तुम्हें पवित्र आत्मा व्यवस्था पालन से मिला या विश्वास से"? जवाब का इशारा बिल्कुल स्पष्ट है कि उन्हें पवित्र आत्मा केवल इस सत्य–संदेश पर विश्वास करने के द्वारा मिला कि मसीह उनके पापों के बदले क्रूस पर मरा (बलि किया गया); अर्थात् विश्वास द्वारा न कि

व्यवस्था के कामों के द्वारा। इसीलिए पौलुस साफ कहता है कि विश्वास द्वारा उद्धार–प्राप्ति के बाद व्यवस्था–पालन द्वारा पवित्रीकरण की बात निरी मूर्खता है। जैसे हम अपना उद्धार करने में असमर्थ थे, वैसे ही अपनी ताकत से ख्रीष्तीय जीवन जीने (अर्थात् पवित्रता में विकास) में भी असमर्थ हैं।

अनुग्रह द्वारा विश्वास से उद्धार पाने के बाद, अब क्या हमारा "शरीर" ("शारीरिकता" यानि हमारे भीतर वास करने वाली घृणित बुराई) हमें पवित्र एवं परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य बनाता है? गलातिया के विश्वासियों को पौलुस यह समझाना चाहता था कि हमारा मसीही जीवन विश्वास के आधार पर प्रारम्भ हुआ है और इसे विश्वास के सहारे ही व्यतीत करना है (कुलु0 2:6)। हमें विश्वास में **स्थिर** रहना है (प0 कुरि0 16:13), विश्वास से **चलना** है (दु0 कुरि0 5:7), और विश्वास से **जीवित रहना** है (गला0 2:20)। भले कार्य, विश्वास के फल हैं; इसके साधन नहीं (रोमि0 1:5)। मसीह के साथ अपने (पुराने मनुष्यत्व के) सह–क्रूसित होने की आध्यात्मिक सच्चाई को जानने, समझने एवं मानने पर हम (पवित्र) आत्मा के चलाए चलने के लिए, शारीरिकता की अधिकार–सत्ता से सशर्त मुक्त हो जाते हैं। जैसे–जैसे हम पवित्र आत्मा के चलाए जीवन व्यतीत करेंगे, वैसे–वैसे पवित्र आत्मा हमारे जीवन को ख्रीष्त जीवन से भरता जाएगा, जिसके नतीजतन हमारे जीवन–आचरण से भले कार्य प्रवाहित होंगे और इस प्रकार हम मसीह के स्वरूप में विकसित किए जाएंगे।

"क्या तुमने इतने कष्ट व्यर्थ ही उठाए? क्या वे सचमुच व्यर्थ थे" (गला0 3:4)? संभवतः अविश्वासी यहूदियों द्वारा गलातिया क्षेत्र के मसीही विश्वासियों को सताया जा रहा था अर्थात् उन्हें अपने मसीही विश्वास के लिए उत्पीड़न सहना पड़ रहा था (दू0 तीमु0 3:12)।

"जो तुम्हें आत्मा प्रदान करता है और तुम में सामर्थ के काम करता है, वह क्या इसलिए करता है कि तुमने व्यवस्था के काम किए अथवा इसलिए कि तुम ने सुसमाचार पर विश्वास किया" (गला0 3:5)? परमेश्वर के वचन के लिपिबद्ध रूप में उपलब्ध होने से पूर्व, सुसमाचार–संदेश की सत्यता को प्रभु परमेश्वर ने प्रायः आश्चर्यकर्मों द्वारा प्रमाणित किया। अतः पौलुस ने गलातिया के विश्वासियों को उनके मध्य हुए आश्चर्यकर्मों के बारे में विचार करने के लिए प्रोत्साहित किया। क्या उनके मध्य आश्चर्यकर्म उनके व्यवस्था–पालन के कारण हुए या मसीह पर उनके विश्वास के द्वारा?

इसके बाद पौलुस ने यह प्रमाणित किया कि उद्धार एवं पवित्रीकरण केवल विश्वास द्वारा ही हैं। *"इसी प्रकार इब्राहीम ने परमेश्वर पर विश्वास किया, और यह उसके लिए धार्मिकता गिनी गई। अतः यह समझ लो कि विश्वास करने वाले ही इब्राहीम की सन्तान हैं और पवित्रशास्त्र ने आरम्भ से यह जानकर कि परमेश्वर विश्वास के द्वारा ग़ैरयहूदियों को धर्मी ठहराएगा, पहिले से ही इब्राहीम को सुसमाचार सुना दिया: 'समस्त जातियां तुझ में आशिष पाएंगी'। इसलिए जो विश्वास करते हैं, वे विश्वासी इब्राहीम के साथ आशिष पाते हैं"* (गला0 3:6–9)। यहूदी रीति–विधियों के प्रचारक यह सिखा रहे थे कि परमेश्वर के समक्ष स्वीकार्य होने के लिए मूसा को दी गई व्यवस्था का अनुसरण करना जरूरी है। अतः पौलुस ने मूसा से पहले के प्रभु–भक्त इब्राहीम का उदाहरण दिया कि वह विश्वास द्वारा ही परमेश्वर के समक्ष स्वीकार्य ठहरा, व्यवस्था के कामों के द्वारा नहीं (उत्प0 15:1–6)। यहूदी व्यवस्था के प्रचारक यह सिखा रहे थे कि सिर्फ ख़तना कराये हुए लोग और व्यवस्था–पालन करने वाले लोग ही इब्राहीम की सच्ची संतान हैं (प्रेरित0 15:1)। इसीलिए पौलुस ने यह स्पष्ट किया कि इब्राहीम ने विश्वास द्वारा

उद्धार पाया; और विश्वास के आधार पर जीने वाले ही इब्राहीम की सच्ची संतान हैं, न कि ख़तना एवं व्यवस्था–कर्मों के आधार पर परमेश्वर की कृपा को कमाने की कोशिश में लगे लोग। तात्पर्य यह है कि कोई भी जन व्यवस्था के कर्मों द्वारा धर्मी नहीं हो सकता।

"परन्तु जो लोग व्यवस्था के कामों पर निर्भर हैं, वे शाप के अधीन हैं, क्योंकि लिखा है, 'जो कोई व्यवस्था की पुस्तक में लिखी सभी बातों का पालन नहीं करता, वह शापित है" (गला0 3:10)। व्यवस्था द्वारा कोई भी व्यक्ति इसलिए धर्मी नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि कोई भी शख्स व्यवस्था का पूर्णरूपेण पालन नहीं कर सकता। अतः व्यवस्था के अधीन होना, अपने आपको व्यवस्था के स्राप (दोष–दंड) के अधीन करना है। चूंकि हम व्यवस्था का अचूक पालन नहीं कर सकते, इसलिए व्यवस्था द्वारा निरन्तर दोषी ठहराए जाना अनिवार्य है।

"इसलिए यह स्पष्ट है कि व्यवस्था द्वारा परमेश्वर की दृष्टि में कोई धर्मी नहीं ठहरता, क्योंकि 'धर्मी जन विश्वास से जीवित रहेगा'। परन्तु विश्वास से व्यवस्था का कोई सम्बन्ध नहीं। इसके विपरीत, 'जो उसकी बातों का पालन करेगा वह उनके कारण जीवित रहेगा'। मसीह ने व्यवस्था के शाप से हमें मूल्य चुका कर छुड़ाया और स्वयं हमारे लिए शापित बना, क्योंकि लिखा है, 'जो कोई काठ पर लटकाया जाता है वह शापित है'। यह इसलिए हुआ कि इब्राहीम की आशिष मसीह यीशु में ग़ैरयहूदियों तक पहुंचे और हम विश्वास के द्वारा उस आत्मा को प्राप्त करें जिसकी प्रतिज्ञा की गई है" (गला0 3:11–14)। परमेश्वर के वचन से स्पष्ट है कि मनुष्य विश्वास द्वारा धर्मी ठहराया जाता है, कर्म द्वारा नहीं। दसवें–ग्यारहवें पदों में बड़े रोचक ढंग से यह सच्चाई सुस्पष्ट कर दी गई है कि व्यवस्था द्वारा सभी मनुष्य शापित किये जा चुके हैं, क्योंकि मनुष्य

व्यवस्था के कामों का पूर्ण–रूपेण पालन नहीं कर सकता। स्वयं प्रभु परमेश्वर की ओर से यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया गया है कि मनुष्य व्यवस्था के कर्मों द्वारा नहीं, बल्कि विश्वास द्वारा धर्मी ठहराया जाता है। यहां पौलुस यह भी याद दिलाता है कि मसीह यीशु ने हमें व्यवस्था के शाप से मुक्त किया है। हमारे सारे दोष–दंड को उसने अपने ऊपर ले लिया। हमारे बदले मसीह यीशु द्वारा पूर्ण किये गये विमोचन कार्य पर **विश्वास के द्वारा ही** हम उद्धार पाते एवं पवित्र किए जाते हैं; न कि दोषी व शापित ठहराने वाली व्यवस्था के कामों द्वारा। व्यवस्था और अनुग्रह में विषमता (असमानता) पर ध्यान दें। परमेश्वर की कृपा को अर्जित करने के लिए मनुष्य का कर्म–प्रयास व्यवस्था है, और इसका अन्त है दोष व दंड की भागीदारी। इसके विपरीत, मनुष्य के लिए परमेश्वर द्वारा सम्पन्न किया गया कार्य, अनुग्रह कहलाता है – हमारे बदले मसीह द्वारा सम्पन्न किए गये महाकार्य द्वारा हमारे उद्धार एवं पवित्रीकरण का ईश्वरीय उपाय।

5

यहां आगे बढ़ने से पहले यह स्मरण रखना जरूरी है कि भ्रामक शिक्षक अपनी झूठी शिक्षा द्वारा गलातिया क्षेत्र के मसीहियों को बहकाने में लगे थे। इसके परिणामस्वरूप वहां के विश्वासी लोग परमेश्वर के अनुग्रह के सत्य–संदेश पर विश्वास रखने के बजाय व्यवस्था के कामों और अनुग्रह के मिक्सचर को मानने लगे थे। पिछले पाठ में हमने यह देखा कि ख़तना–विधि और व्यवस्था के दिए जाने से पूर्व इब्राहीम विश्वास द्वारा परमेश्वर के समक्ष धर्मी एवं ग्रहणयोग्य ठहराया गया। अब पौलुस पुनः इस बात की अभिपुष्टि करता है कि परमेश्वर के समक्ष हमारी स्वीकार्यता का आधार व्यवस्था के काम नहीं हैं।

*"भाइयों, मैं मानवीय सम्बन्धों की रीति पर कहता हूं: मनुष्य का वसीयतनामा भी जब एक बार निश्चित हो जाता है तो उसे कोई रद्द नहीं करता और न उसमें कुछ जोड़ता है। अतः प्रतिज्ञाएं इब्राहीम और उसके वंशज से की गई थीं। शास्त्र नहीं कहता, '**और वंशजों से**', जैसे बहुतों की ओर संकेत कर रहा हो, परन्तु इसके बदले एक ही की ओर, '**और तेरे वंशज से**,' जो मसीह है"* (गला0 3:15–16)। जिस समय पौलुस ने यह पत्री लिखी, उन दिनों, यदि दो व्यक्ति किसी विषय में औपचारिक तौर पर एक–दूसरे के साथ कोई समझौता (वाचा या प्रतिज्ञा) करते थे तो ऐसी वाचा या प्रतिज्ञा अपरिवर्तनीय होती थी। अतः पौलुस कहता है कि यदि मनुष्यों की परस्पर वाचा इतनी पक्की हो सकती है, तो प्रभु परमेश्वर की प्रतिज्ञा इससे बेहद महान व सच्ची क्यों नहीं होगी? प्रभु परमेश्वर ने सचमुच इब्राहीम से यह वायदा किया था कि उसके वंश के द्वारा पृथ्वी की सारी जातियां आशिष पाएंगी – अर्थात् केवल **मसीह** के द्वारा सबके लिए उद्धार उपलब्ध होगा।

"मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि जिस वाचा को परमेश्वर ने पहिले से निश्चित कर दिया उसको वह व्यवस्था, जो चार सौ तीस वर्ष पश्चात् दी गई, रद्द नहीं कर सकती और न उसकी प्रतिज्ञा को व्यर्थ ठहरा सकती है। क्योंकि यदि उत्तराधिकार व्यवस्था पर आधारित है तो प्रतिज्ञा पर आधारित नहीं हो सकता, परन्तु परमेश्वर ने इब्राहीम को यह उत्तराधिकार प्रतिज्ञा द्वारा दिया" (गला0 3:17–18)। प्रभु परमेश्वर ने इब्राहीम से यह वायदा किया था कि '**पृथ्वी के सब घराने उसमें आशीष पाएंगे**'। इसके "चार सौ तीस वर्ष पश्चात्" परमेश्वर ने मूसा द्वारा व्यवस्था प्रदान की। इस प्रकार पौलुस यह कह रहा है कि व्यवस्था प्रदान किए जाने का अर्थ यह नहीं है कि परमेश्वर ने जो वायदा किया था, वह रद्द कर दिया गया। व्यवस्था दो पक्षों के मध्य एक संविदा (करार या कान्ट्रैक्ट) है। इस करार के सम्पन्न होने हेतु दोनों पक्षों को अपना–अपना कर्तव्य (दायित्व) पूरा करना अनिवार्य है। व्यवस्था के अनुसार धर्मी ठहराए जाने हेतु मनुष्य के लिए यह अनिवार्य है कि वह लेशमात्र भी व्यवस्था का उल्लंघन न करे। लेकिन हकीकत यह है कि सभी मनुष्यों ने व्यवस्था का उल्लंघन किया है। इसलिए व्यवस्था (पालन) द्वारा धर्मी ठहराया जाना असंभव है। क्यों? क्योंकि व्यवस्था (संविदा या करार) के अनुसार मनुष्य अपना कर्तव्य–दायित्व पूरा करने में असफल है।

परमेश्वर के वायदे पर विश्वास द्वारा उद्धार–प्राप्ति इससे भिन्न है। क्योंकि यह पूर्णरूपेण प्रतिज्ञा करने वाले (अर्थात् परमेश्वर) की **विश्वसनीयता** पर आधारित है। इस प्रकार हमें प्राप्त होने वाली 'आशीष' हमारी विश्वासयोग्यता पर नहीं, बल्कि प्रभु परमेश्वर की विश्वासयोग्यता पर आधारित है; चूंकि सत्य परमेश्वर की बात कभी विफल नहीं होती, उसकी बात सदैव सच्ची व पक्की होती है और वह कभी धोखा नहीं देता; इसलिए उसके वायदे सदैव अटल, स्थिर एवं अपरिवर्तनीय होते हैं।

अतः पौलुस यह कहता है कि पवित्र आत्मा पाने, आश्चर्यकर्म का अनुभव करने अथवा परमेश्वर के समक्ष स्वीकार्यता की योग्यता (विश्वासी द्वारा) व्यवस्था–पालन से नहीं मिलती। व्यवस्था के कामों को करने के द्वारा धर्मी बनने की कोशिश में लगे लोगों को व्यवस्था सिर्फ दोषी ठहराती है। परन्तु इब्राहीम को दी गई **विश्वास द्वारा धर्मी ठहराए जाने की** ईश्वरीय प्रतिज्ञा अभी भी अटल है। यह ईश्वरीय प्रतिज्ञा व्यवस्था के आने से निरस्त नहीं हुई है।

तो फिर व्यवस्था से क्या लाभ? पौलुस के इस उत्तर पर ध्यान दें: *"तो फिर व्यवस्था की क्या आवश्यकता रही? वह अपराधों के कारण बाद में दी गई कि उस वंशज के आने तक रहे जिसकी प्रतिज्ञा की गई थी। और वह स्वर्गदूतों के द्वारा एक मध्यस्थ के हाथ ठहराई गई"* (गला0 3:19)। यदि कोई किसी ऐसी चीज का वायदा करे जिसकी जरूरत को हम नहीं समझते या उस चीज को हम नहीं चाहते; तो ऐसा वायदा हमारे लिए कितना महत्वपूर्ण होता है? ऐसा वायदा हमारी दृष्टि में ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं होता। विश्वास द्वारा उद्धार की प्रतिज्ञा भी संसार की दृष्टि में ऐसी ही रही है। क्यों? क्योंकि मनुष्य पापी है और अपने पाप में आध्यात्मिक तौर पर इतना अंधा हो गया है कि अपने पापीपन को नहीं पहचानता और न ही यह जानता है कि उसे उद्धार की आवश्यकता है अर्थात् वह अपनी सच्ची आत्मिक आवश्यकता को नहीं समझता। इसी कारण से प्रभु परमेश्वर ने व्यवस्था प्रदान किया। व्यवस्था के बगैर मनुष्य अपने पापीपन को नहीं पहचानता। मनुष्य परमेश्वर–प्रदत्त व्यवस्था का पूर्णरूपेण पालन करने में असमर्थ रहा है, और इस प्रकार उसे यह जानने–पहचानने का अवसर मिला है कि उसे उद्धारकर्ता की आवश्यकता है। अतः पौलुस स्पष्ट करता है कि व्यवस्था 'मसीह के आने तक के लिए' दी गई थी; क्योंकि मसीह ने हमारे बदले व्यवस्था की मांग को विधिवत् एवं पूर्णरूपेण पूरा किया और इस प्रकार व्यवस्था (पालन में हमारी असमर्थता) के श्राप से हमें मुक्त किया।

"मध्यस्थ कम से कम दो के बीच होता है, परन्तु परमेश्वर तो एक ही है" (गला0 3:20)। यहां व्यवस्था और परमेश्वर की प्रतिज्ञा में अन्तर की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है। व्यवस्था के सम्बन्ध में परमेश्वर और मनुष्य के बीच एक मध्यस्थ भी था (अर्थात् मूसा), और दोनों पक्षों को करार के अनुसार अपने कर्तव्यों को पूर्णरूपेण पूरा करना था। परन्तु विश्वास द्वारा उद्धार की प्रतिज्ञा के सम्बन्ध में केवल एक ही पक्ष की विश्वसनीयता महत्वपूर्ण एवं जरूरी है; अर्थात् परमेश्वर का वायदा, और इसमें किसी मध्यस्थ की कोई आवश्यकता नहीं है।

"तो क्या व्यवस्था परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं के विरुद्ध है? कदापि नहीं। यदि ऐसी व्यवस्था दी गई होती जो जीवन प्रदान कर सकती थी तो वास्तव में धार्मिकता व्यवस्था–पालन पर निर्भर होती" (गला0 3:21)। ध्यान दें। व्यवस्था परमेश्वर के वायदों (प्रतिज्ञाओं) के विरुद्ध नहीं है। क्यों? क्योंकि व्यवस्था मनुष्य को धार्मिकता प्रदान करने के लिए नहीं दी गई थी। व्यवस्था तो मनुष्य की अधार्मिकता दर्शाने हेतु दी गई थी ताकि वह अपने लिए परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं को पहचान सके। इस प्रकार व्यवस्था परमेश्वर के अनुग्रह के विरुद्ध नहीं बल्कि परमेश्वर के अनुग्रह के महत्व एवं आवश्यकता को पहचानने में सहायक है। व्यवस्था मृत्यु–मार्ग दर्शाने हेतु दी गई थी, जीवन और धार्मिकता हेतु नहीं। व्यवस्था, परमेश्वर से हमारी विमुखता या अलगाव दर्शाने हेतु दी गई थी, जिससे कि हम मसीह की ओर मन लगाने के द्वारा उससे अनन्त जीवन एवं पवित्रता प्राप्त करें।

6

"परन्तु विश्वास के आने से पूर्व हम व्यवस्था के संरक्षण में बन्दी थे, और विश्वास के प्रकट होने तक हम उसी के नियंत्रण में रहे। इस प्रकार मसीह तक पहुंचाने के लिए व्यवस्था हमारी शिक्षक बन गई है जिससे हम विश्वास द्वारा धर्मी गिने जाएं। परन्तु जब विश्वास आ चुका है तो अब हम शिक्षक के आधीन नहीं रहे" (गला0 3:23–25)। इस्राएलियों के जीवन में व्यवस्था की उपयोगिता की बात की ओर पौलुस पुनः ध्यान आकर्षित करता है। तेईसवें पद में "विश्वास के आने से पूर्व" वाक्यांश मसीह की मृत्यु, दफन एवं पुनरुत्थान की ओर इशारा करता है। यीशु मसीह के आने, हमारे पापों के बदले बलिदान होकर मरने एवं पुनः जी उठने से पूर्व तक यहूदी लोग व्यवस्था के अधीन थे। व्यवस्था का उद्देश्य मनुष्य के पापीपन को प्रकट करना था, जिससे कि परमेश्वर के अनुग्रह से विश्वास के द्वारा वह मसीह के पास आए। अब चूंकि मसीह आ चुका है और उसने मनुष्य के पापों का दंड–मूल्य पूर्णरूपेण चुकता कर दिया है, इसलिए अब (मसीह के इस महाकार्य पर विश्वास करने वाले) विश्वासियों के लिए व्यवस्था रूपी शिक्षक या माध्यम (की अधीनता में रहने) की आवश्यकता नहीं है। चौबीसवें पद में प्रयुक्त "व्यवस्था हमारी **शिक्षक**" रूपी वाक्यांश यह बताता है कि परमेश्वर द्वारा व्यवस्था का इस्तेमाल मनुष्य को यह सिखाने हेतु किया गया कि वह एक पापी है। अतः व्यवस्था इसलिए दी गई ताकि मनुष्य सुसमाचार सुनने एवं सुसमाचार पर विश्वास करने हेतु तैयार किया जाय। व्यवस्था का मकसद लोगों के जीवन में मसीह की जरूरत दर्शाना है।

"क्योंकि तुम सब उस विश्वास के द्वारा जो मसीह यीशु पर है, परमेश्वर की संतान हो" (गला0 3:26)। स्मरण रहे कि यहूदी रीति–रिवाजों का प्रचार करने वाले लोग गलातिया के (नये) विश्वासियों को व्यवस्था के बंधन में डालना चाह रहे थे। अतः तेईसवें से पच्चीसवें पदों में पौलुस पुनः इस सच्चाई की याद दिलाता है कि यहूदियों को व्यवस्था इसलिए दी गई थी कि वे अपने लिए मसीह की आवश्यकता को समझें। लेकिन अब मसीह आ चुका है और उद्धार प्रदान करने का महाकार्य विधिवत पूर्ण कर चुका है, अतएव अब उसके विश्वासियों को व्यवस्था के कामों के बंधन में रहने की आवश्यकता नहीं है। इतना ही नहीं, बल्कि छब्बीसवें पद के अनुसार गलातिया के (ग़ैरयहूदी पृष्ठभूमि के) लोग भी मसीह पर विश्वास के द्वारा परमेश्वर की संतान थे और व्यवस्था के बंधन से मुक्त।

"तुम में से जितनों नें मसीह में बपतिस्मा लिया है उन्होंने मसीह को पहिन लिया है। अब न कोई यहूदी है और न यूनानी, न दास है और न स्वतंत्र, न पुरुष है और न स्त्री, क्योंकि तुम सब मसीह यीशु में एक हो" (गला0 3:27–28) जिस क्षण हम यह विश्वास करते हैं कि हमारे पापों का दंड–मूल्य मसीह यीशु ने अपनी मृत्यु द्वारा चुकता कर दिया है, उसी क्षण पवित्र आत्मा द्वारा हम मसीह में स्थापित कर दिए जाते हैं और "मसीह के साथ सह–उत्तराधिकारी" हो जाते हैं। वह और जो कुछ उसका है, उसमें हम सहभागी हो जाते हैं (रोमि0 8:17)। इसके परिणामस्वरूप व्यवस्था के प्रति हमारा सम्बन्ध व्यवस्था के साथ मसीह के सम्बन्ध जैसा हो जाता है। प्रभु यीशु मसीह व्यवस्था का पूर्णरूपेण पालन कर चुका है और वह परमेश्वर पिता के दाहिने ओर विराजमान है। वह

अब व्यवस्था के अधीन नहीं है। पौलुस के अनुसार यही सच्चाई मसीह के विश्वासियों पर भी लागू होती है। मसीह के विश्वासी लोग "मसीह में" हैं, "मसीह को पहिन लिए" हैं। अब विश्वासी लोग व्यवस्था की गुलामी से आजाद हैं – चाहे जिस पृष्ठभूमि से मसीही हुए हों।

"और यदि तुम मसीह के हो तो इब्राहीम की संतान और प्रतिज्ञा के अनुसार उत्तराधिकारी भी हो" (गला0 3:29)। इब्राहीम से परमेश्वर ने यह वायदा किया था कि उसके वंश (अर्थात् मसीह) द्वारा संसार की सारी जातियों को उद्धार रूपी आशिष प्रदान की जाएगी। परमेश्वर के इस वचन (प्रतिज्ञा) पर इब्राहीम ने विश्वास किया और इस विश्वास के द्वारा परमेश्वर के समक्ष धर्मी ठहराया गया (उत्प0 15:6; 22:18; 26:4)। इब्राहीम की तरह, इब्राहीम के **वंशज** (मसीह) पर विश्वास करने वाले भी धर्मी ठहराए जाते हैं। यहां यह भी याद रखना जरूरी है कि इब्राहीम से की गई समस्त पार्थिव (इहलौकिक या भौतिक) आशिषों की प्रतिज्ञाएं केवल इस्राएल के लिए थीं; हमारे लिए नहीं। बहरहाल, मसीह द्वारा उपलब्ध समस्त आध्यात्मिक आशिषें हमारी हैं। रोचक है कि परमेश्वर ने इब्राहीम के **वंश** द्वारा उद्धारकर्ता का वायदा किया। सत्ताईसवें पद के अनुसार उद्धार पाने के समय हम मसीह में स्थापित कर दिए जाते हैं और इस प्रकार इब्राहीम के **वंश** के हो जाते हैं, जैसे कि मसीह उसके **वंश** का था।

"मैं यह कहता हूं कि उत्तराधिकारी जब तक नाबालिग है, यद्यपि सब वस्तुओं का स्वामी है, फिर भी उसमें और दास में कोई अन्तर नहीं रहता, परन्तु पिता द्वारा ठहराए हुए समय तक वह संरक्षकों और प्रबन्धकों के अधीन रहता है" (गला0 4:1–2)। पौलुस के समय में धनी

परिवार के लोग अपने किसी एक 'दास या सेवक' को अपने बच्चों की देखरेख (प्रशिक्षक) का काम सौंप देते थे। एक निश्चित समय (उम्र) के बाद वह बच्चा किसी 'सेवक' के अधीन नहीं रहता था, बल्कि अपने घराने का एक वयस्क सदस्य हो जाता था और एक वयस्क की भांति अपनी जिम्मेदारी पूरी करना शुरू कर देता था। जब तक वह किसी 'दास या सेवक' की देखरेख या अधीनता में रहता था तब तक वह अन्य दासों से बहुत भिन्न नहीं होता था, क्योंकि उसे 'क्या करो या क्या न करो' सुनना–मानना पड़ता था।

"वैसे ही हम भी बाल्यावस्था में जगत की प्रारम्भिक शिक्षाओं के दासत्व में थे। परन्तु जब समय पूरा हुआ तो परमेश्वर ने अपने पुत्र को भेजा जो स्त्री से उत्पन्न हुआ और व्यवस्था के अधीन उत्पन्न हुआ, कि जो लोग व्यवस्था के अधीन हैं उन्हें मूल्य चुकाकर छुड़ा ले, और हम को लेपालक पुत्र होने का अधिकार प्राप्त हो" (गला0 4:3–5)। परम प्रधान परमेश्वर ने अपने सुनिश्चित समय पर "अपने एकलौते पुत्र" को व्यवस्था के अधीन एक यहूदी परिवार में **देहाधारी** होने दिया, ताकि व्यवस्था के शाप के अधीन जीने वाले सब लोगों का छुटकारा करे और हम सब को परमेश्वर की संतान बनाए। गलातिया के मसीहियों को पौलुस यह दर्शा रहा था कि अब उन्हें "व्यवस्था की अधीनता में रहने वालो" से बहुत बेहतर आशीष प्राप्त है – मसीह के विश्वासी होने के कारण अब वे परमेश्वर की (वयस्क) संतान हो गये हैं।

"इसलिए कि तुम पुत्र हो, परमेश्वर ने अपने पुत्र के आत्मा को, जो 'हे अब्बा! हे पिता'! कह कर पुकारता है, हमारे हृदयों में भेजा है। इसलिए अब तू दास नहीं, परन्तु पुत्र है, और जब पुत्र है तो परमेश्वर के

द्वारा उत्तराधिकारी भी" (गला0 4:6–7)। अब चूंकि हम परमेश्वर की संतान हैं, इसलिए वह अपने पवित्र आत्मा द्वारा हममें वास करता है। उसका पवित्र आत्मा ही हमारे भीतर इस सत्य की साक्षी देता है और उसे अपना "पिता" कहकर पुकारने का साहस प्रदान करता है। अब हम उसके "दास" नहीं, बल्कि उसकी संतान हैं; इसलिए मसीह के द्वारा "परमेश्वर के उत्तराधिकारी" अर्थात् वारिस (रोमि0 8:16–17) हैं। "मसीह में" व्यवस्था से हमें मुक्त कर दिया गया है। विश्वासियों द्वारा अपने आप को पुनः व्यवस्था के अधीन करना मूर्खता है।

7

"इसलिए अब तू दास नहीं, परन्तु पुत्र है और जब पुत्र है तो परमेश्वर के द्वारा उत्तराधिकारी भी। अतः उस समय जब तुम परमेश्वर को नहीं जानते थे तो उनके दास थे जो स्वभाव से ईश्वर नहीं। परन्तु अब तुम ने परमेश्वर को पहिचान लिया है, अथवा यूं कहें कि परमेश्वर ने तुम को पहिचान लिया है, फिर यह कैसे कि तुम उन निर्बल, व्यर्थ और प्रारम्भिक शिक्षाओं की ओर लौट रहे हो? क्या तुम फिर से उनके दास होना चाहते हो? तुम विशेष दिनों, महीनों, ऋतुओं व वर्षों को मानने लगे हो। मुझे भय है कि कहीं तुम्हारे लिए किया गया मेरा परिश्रम व्यर्थ न हो जाए" (गला0 4:7–11)। संत पौलुस ने गलातिया क्षेत्र के विश्वासियों को इस सच्चाई की याद दिलायी कि अब वे "दास" नहीं, बल्कि परमेश्वर की संतान हैं। वे जब सच्चे परमेश्वर को नहीं जानते थे तो ऐसी चीजों की सेवा (उपासना) करते थे जो **ईश्वर नहीं** थीं। अब सच्चे परमेश्वर की पहचान के बाद, उद्धार (या पवित्र आत्मा) प्रदान करने में असमर्थ चीजों की ओर पुनः वापस जाना पौलुस के परिश्रम को व्यर्थ ठहराने जैसा हुआ। विशिष्ट दिनों, महीनों और समयों को मानने के द्वारा गलातिया के लोग अपने आप को पुनः व्यवस्था की रीति–विधियों के सहारे परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य ठहराने के प्रलोभन में डाल रहे थे, और उनके बदले मसीह द्वारा सम्पन्न उद्धार–कार्य से प्राप्त आध्यात्मिक स्वतंत्रता से विमुख हो रहे थे। अतः पौलुस उनकी इस दशा से चिन्तित था कि शायद वे उससे प्राप्त सत्य शिक्षा से भटकने लगे हैं।

"हे भाइयों, मैं तुम से विनती करता हूं, कि तुम मेरे समान बन जाओ, क्योंकि मैं भी तुम्हारे समान बन गया हूं, तुम ने मेरा कुछ नहीं बिगाड़ा" (गला0 4:12)। गलातिया के जिन विश्वासियों को यह पत्री सम्बोधित की गई है, वह लोग ग़ैरयहूदी पृष्ठभूमि से थे और उनका पालन–पोषण यहूदी व्यवस्था के अधीन नहीं हुआ था। किन्तु अब वह लोग इन झूठे शिक्षकों के प्रभाव में आकर यहूदी रीति–विधियों में जा रहे थे। इसके विपरीत, इस पत्री का लेखक अर्थात् संत पौलुस यहूदी व्यवस्था–बंधन की पृष्ठभूमि से था, परन्तु अब ख्रीष्त में नई स्वतंत्रता पाए था। अतः पौलुस उन्हें यह समझाता है कि "मेरे समान" (व्यवस्था की दासता से स्वतंत्र) हो जाओ, "क्योंकि मैं भी तुम्हारे समान" (व्यवस्था की अधीनता में नहीं रह रहे जैसा) हो गया हूं।

"तुम जानते हो कि मैं पहली बार किसी शारीरिक अस्वस्थता के कारण ही तुम्हें सुसमाचार सुना सका। पर तुमने मेरी शारीरिक दशा को, जो तुम्हारी परीक्षा का कारण थी, तुच्छ न जाना और न ही उस से घृणा की, परन्तु तुमने मुझे परमेश्वर के दूत वरन् स्वयं मसीह यीशु की तरह ग्रहण किया। अब तुम्हारे आनन्द की वह भावना कहां गई? इस बात का मैं साक्षी हूं कि यदि सम्भव होता तो तुम अपनी आंखें तक निकाल कर मुझे दे देते। क्या सच बोलने के कारण मैं तुम्हारा शत्रु बन गया हूं" (गला0 4:13–16)। पौलुस ने गलातिया के विश्वासियों को यह भी याद दिलाया कि जब पहली बार उन्हें सुसमाचार सुनाने पहुंचा था तो उन्होंने उसे किस प्रकार ग्रहण किया था। यद्यपि, उस समय वह शारीरिक तौर पर अस्वस्थ था (और उनके लिए एक बोझ जैसा था), तब भी उन लोगों ने उसका तिरस्कार नहीं किया, बल्कि उसकी उपस्थिति एवं शिक्षा को आशीष का माध्यम मान कर एक स्वर्गदूत की तरह हार्दिक स्वागत

किया था। उसके प्रति उनका स्वागत एवं स्नेह इतना अधिक रहा जैसे कि यदि संभव होता तो वे "**अपनी आंखें**" भी निकाल कर उसे दे देते। परन्तु अब पौलुस के प्रति उनका रुख बदल गया था।

यह इस बात का एक उदाहरण है कि शारीरिकता हमारी कलीसियाओं में क्या करती है। प्रारम्भ में गलातिया के लोगों ने सुसमाचार के प्रति और परमेश्वर के उद्धारप्रद अनुग्रह के प्रति बड़ी उत्तेजना एवं उत्साह व्यक्त किया। लेकिन अब वे शारीरिकता के चलाए चल रहे थे, सत्य को समझने में असमर्थ थे, और इसके परिणामस्वरूप परमेश्वर के अनुग्रह से विमुख होकर व्यवस्था के पीछे हो लिए थे। इतना ही नहीं, बल्कि पौलुस को अपना शुभचिंतक (मित्र) मानने से इनकार कर रहे थे। जब हम "अपने मन की अनर्थ रीति" पर चलते हैं (इफि0 4:17–18) तब हम परमेश्वर के अनुग्रह से दूर होकर पुनः व्यवस्था की अधीनता में जाने लगते हैं, क्योंकि तब हम मसीह को महिमान्वित करने के बजाय स्वयं अपने मान–सम्मान एवं बड़ाई की चाहत करने लगते हैं।

"वे तुम्हें प्रभावित करके मित्र बनाना तो चाहते हैं, परन्तु भले उद्देश्य से नहीं। वे तुम्हें मुझ से अलग करना चाहते हैं कि तुम उन्हीं को मित्र बना लो, परन्तु यह और भी अच्छा है कि भले उद्देश्य से उत्सुकतापूर्वक मित्र बनाने का प्रयत्न हर समय किया जाए, केवल उसी समय नहीं जबकि मैं तुम्हारे साथ रहता हूं" (गला0 4:17–18)। तब पौलुस ने उन्हें यह समझाया कि यद्यपि झूठे शिक्षक अपना प्रभाव जमाने के लिए बहुत अधिक प्रयास कर रहे हैं, लेकिन विश्वासियों के लिए उनका प्रभाव हितकर नहीं है। झूठे शिक्षक जो कुछ कर रहे थे उससे गलातिया के विश्वासियों की आत्मिक उन्नति नहीं होनी थी। वे शिक्षक सिर्फ अपनी बड़ाई और नाम कमाई में लगे थे। किसी

प्रभाव में आना अच्छी बात है, किन्तु यह प्रभाव केवल सत्य का प्रभाव होना चाहिए। सुसमाचार के शिक्षक जब शरीर के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं, तब सत्यपूर्ण शिक्षा नहीं देते बल्कि अपनी बड़ाई और नाम–कमाई की ओर झुके रहते हैं। इसके विपरीत जब हम पवित्र **आत्मा** के अधीन जीवन जीते हैं तब ख्रीष्त को महिमान्वित करते हैं और सत्य की अगुवाई में होते हैं (यूह0 16:13–14)।

"हे मेरे बच्चों, जब तक तुम में मसीह का रूप न बन जाए, मैं तुम्हारे लिए प्रसव की सी पीड़ा में हूं। इच्छा तो यही होती है कि अब तुम्हारे पास आकर और ही तरह से बोलूं, क्योंकि मैं तुम्हारे लिए दुविधा में हूं" (गला0 4:19–20)। इन बाइबिल पदों में गलातिया क्षेत्र के विश्वासियों के प्रति संत पौलुस के सच्चे प्रेम व चिंता की झलक दिखाई देती है। जैसे किसी महिला के लिए शारीरिक तौर पर प्रसव का समय पीड़ादायी होता है, उसी तरह गलातिया के विश्वासियों की झूठी शिक्षा से प्रभावित संघर्षमय अवस्था, पौलुस के लिए आत्मिक तौर पर कष्टप्रद थी। वह उनसे भेंट करने तथा उन्हें सत्य की ओर उन्मुख होते देखने का बहुत इच्छुक था; जिससे कि वे मसीह के स्वरूप में ढाले जाएं। आत्मा के अनुसार जीवन व्यतीत करने वालों में अपने मसीही भाई–बहिनों की आत्मिक अवस्था के बारे में सच्ची चिन्ता पाई जाती है। इसके विपरीत शारीरिक जीवन व्यतीत करने वालों में सिर्फ अपने स्वार्थ एवं नाम–कमाई की चिन्ता रहती है। आत्मा के अनुसार जीवन व्यतीत करने वाले लोग, पौलुस की तरह, दूसरे विश्वासियों के जीवन में ख्रीष्त–जीवन–स्वभाव विकसित होते देखना चाहते हैं; जबकि शारीरिकता के अधीन जीने वाले लोग, दूसरे विश्वासियों की असफलता एवं दुर्बलताओं को देखकर अपने को उनसे बेहतर अर्थात् ज्यादा धर्मी दिखाते हैं।

"हे तुम जो व्यवस्था के अधीन रहना चाहते हो, मुझे बताओ: क्या तुम व्यवस्था की नहीं सुनते? यह लिखा है कि इब्राहीम के दो पुत्र थे, एक दासी से और एक स्वतन्त्र स्त्री से। परन्तु जो दासी से उत्पन्न हुआ वह शारीरिक रीति से जन्मा, और जो पुत्र स्वतन्त्र स्त्री से हुआ वह प्रतिज्ञा के अनुसार जन्मा। इसमें एक दृष्टांत है: ये स्त्रियां मानो दो वाचाएं हैं, एक तो सीनै पर्वत की, जिस से केवल दास ही उत्पन्न होते हैं – और वह हाजिरा है। और हाजिरा मानो अरब का सीनै पर्वत है, जो वर्तमान यरूशलेम के समान है, क्योंकि वह अपनी सन्तानों सहित दासत्व में है। परन्तु ऊपर की यरूशलेम स्वतन्त्र है, और वह हमारी माता है। क्योंकि लिखा है, 'हे बांझ, तू जो नहीं जानती, प्रभु में आनन्द मना। तू जो प्रसव पीड़ा नहीं जानती, हर्षनाद कर, क्योंकि त्यागी हुई की सन्तान, सुहागिन की सन्तान से अधिक हैं'। और हे भाइयों, तुम इसहाक के समान प्रतिज्ञा की सन्तान हो (गला0 4:21–28)। यहां पौलुस की बात का भावार्थ यह है कि 'हे, व्यवस्था के अधीन रहने के इच्छुक जन! क्या परमेश्वर के उद्देश्य के बारे में तुम इब्राहीम, सारा, इसहाक, हाजिरा और इश्माएल के जीवन–वृत्तान्त से कुछ भी नहीं सीखे'? प्रभु परमेश्वर ने यह वायदा किया था कि उद्धारकर्ता का आगमन इब्राहीम के वंश (उसकी अपनी पत्नी सारा) से ही होगा और वह सारे संसार के लिए आशीष का माध्यम होगा। लेकिन धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करने के बजाय अपनी दासी हाजिरा के पास जाकर इब्राहीम ने अपने प्रयास से ही परमेश्वर की प्रतिज्ञा को पूर्ण करना चाहा। इब्राहीम तो मनुष्य की रीति पर परमेश्वर की कार्य–योजना को पूर्ण करना चाहा। परन्तु ईश्वरीय वायदे को मनुष्य के तरीके से पूरा करने में इब्राहीम की मदद को तथा इश्माएल के माध्यम से प्रतिज्ञात उद्धारकर्ता लाने की कोशिश को, प्रभु परमेश्वर ने अस्वीकार कर

दिया। उत्पत्ति की पुस्तक के बाईसवें अध्याय के दूसरे पद में परमेश्वर द्वारा **इसहाक** को इब्राहीम का "एकलौता पुत्र" कहा गया है (उत्प0 22:2)। तात्पर्य यह है कि परमेश्वर की दृष्टि में 'शारीरिकता के पुत्र' (इश्माएल) को प्रतिज्ञात पुत्र का दर्जा नहीं दिया गया है। आगे चलकर वृद्धावस्था में प्रभु परमेश्वर ने आश्चर्यपूर्ण एवं सामर्थी तरीके से सारा के द्वारा इसहाक को जन्म दिया और इस प्रकार ईश्वरीय वायदा पूर्ण हुआ। जैसे इब्राहीम द्वारा झटपट ईश्वरीय वायदा पूरा करने के शारीरिक प्रयास को परमेश्वर ने अस्वीकार किया, उसी प्रकार व्यवस्था के कामों को पूरा करने के स्व–प्रयास द्वारा हम परमेश्वर को प्रसन्न करने में (अर्थात् उसके समक्ष ग्रहणयोग्य होने में) सफल नहीं होते। इसके बजाय पिता परमेश्वर ने अपने पुत्र (यीशु मसीह) द्वारा हमारे बदले जो महान उद्धार–कार्य पूर्ण किया है, उसी के द्वारा ही हम परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य होते हैं।

"परन्तु जैसा उस समय शरीर के अनुसार जन्मा हुआ तो आत्मा के अनुसार जन्मे हुए को सताता था, वैसा ही अब भी होता है" (गला0 4:29)। यहां "शरीर के अनुसार जन्मा" इश्माएल की ओर इंगित करता है और "आत्मा के अनुसार जन्मा" इसहाक की ओर इशारा करता है। जैसे इसहाक से ईर्ष्या करने वाला इश्माएल उसे सताता था, उसी प्रकार, पौलुस के जमाने में व्यवस्था के अधीन चलने वाले यहूदी लोग प्रारम्भिक कलीसिया के विश्वासियों का उत्पीड़न कर रहे थे। **प्रेरितों के काम** नामक बाइबॅल–पुस्तक के अध्ययन से स्पष्ट है कि व्यवस्था–पालन का दावा करने वाले लोगों ने ही पौलुस तथा अन्य मसीही विश्वासियों का उत्पीड़न किया (दू0 तीमु0 3:12)। आज भी ऐसा होता है – अपनी शक्ति व युक्ति के सहारे मसीही विश्वासी जीवन व्यतीत करने की कोशिश में लगे लोग परमेश्वर के सच्चे अनुग्रह के संदेश का विरोध करते हैं।

"परन्तु पवित्र शास्त्र में क्या लिखा है? 'दासी और उसके पुत्र को निकाल दे, क्योंकि दासी का पुत्र तो स्वतन्त्र स्त्री के पुत्र के साथ उत्तराधिकारी नहीं होगा' इसलिए हे भाइयों, हम दासी की नहीं परन्तु स्वतंत्र स्त्री की संतान हैं" (गला0 4:30–31)। प्रभु परमेश्वर ने इब्राहीम को आज्ञा दी कि हाजिरा और उससे पैदा हुए पुत्र को अपने घर से निकाल दे, क्योंकि **प्रतिज्ञात् उद्धारकर्ता** के बारे में ईश्वरीय वायदा उसके द्वारा नहीं, बल्कि इब्राहीम की पत्नी सारा से उत्पन्न (प्रतिज्ञात् पुत्र) इसहाक द्वारा पूर्ण होगा। परमेश्वर हमसे भी यही उम्मीद रखता है कि हम अपनी शक्ति व युक्ति के द्वारा व्यवस्था के कामों को करके परमेश्वर को प्रसन्न करने (उसके समक्षग्रहण योग्य होने) की व्यर्थ कोशिश त्याग दें। क्योंकि हमें प्राप्त "उत्तराधिकार" सिर्फ प्रतिज्ञात् जन अर्थात् यीशु मसीह द्वारा पूर्ण किए गये कार्य द्वारा उपलब्ध है। परमेश्वर की उस अद्‌भुत प्रतिज्ञा की आशिषें, जिसे उसने अपने अनुग्रह से अपने "एकलौते पुत्र" यीशु मसीह द्वारा पूर्ण किया है, उसकी संतानों के लिए उपलब्ध हैं। प्रभु परमेश्वर हमसे यह आशा नहीं रखता कि हम (परित्यक्त चीज से चिपके रहकर अर्थात) मनुष्य की व्यर्थ कोशिश द्वारा अपनी आत्मिक मिरास प्राप्त करें।

8

"मसीह ने स्वतंत्रता के लिए हमें स्वतंत्र किया है, इसलिए दृढ़ रहो और दासत्व के जुए में फिर न जुतो" (गला0 5:1)। इस पत्री के चौथे अध्याय में पौलुस यह स्पष्ट कर चुका है कि मसीही विश्वासी लोग परमेश्वर के अनमोल अनुग्रह के द्वारा उसके घराने के सदस्य हो गये हैं और व्यवस्था की अधीनता एवं अहं–केन्द्रित कर्मकांडों से मुक्त हो चुके हैं। अतः पौलुस इस बात पर जोर देता है कि व्यवस्था–बंधन से मुक्त किए जाने के बाद हमें पुनः उसकी ओर नहीं जाना है। इसके विपरीत हमें विश्वास से **मसीह में** प्राप्त स्वतंत्रता में स्थिर रहना है। मिस्र से छुटकारा पाने के बाद, बियावान के सफर के दौरान, भोजन व जल की समस्या के कारण इस्राएली लोग भी पुनः मिस्र की गुलामी में जाना चाहते थे। बहरहाल, मसीह में स्वतंत्र किए गये और परमेश्वर द्वारा ग्रहण किए गये विश्वासी द्वारा पुनः व्यवस्था–बंधन में जाने एवं स्व–कर्म प्रयास द्वारा परमेश्वर को प्रसन्न करने की बात सोचना मूर्खता है।

"देखो, मैं पौलुस तुमसे कहता हूं कि यदि ख़तना कराओगे तो मसीह से तुम्हें कुछ लाभ न होगा। और मैं प्रत्येक को जो खतना कराता है बतलाए देता हूं कि उसे सम्पूर्ण व्यवस्था का पालन करना पड़ेगा। तुम जो व्यवस्था के द्वारा धर्मी ठहरना चाहते हो, मसीह से अलग और अनुग्रह से वंचित हो गए हो" (गला0 5:2–4)। अनन्त जीवन और ईश्वरीय स्वीकार्यता पाने के लिए व्यवस्था का पालन रूपी अपनी योग्यता पर भरोसा रखना, क्रूस पर मसीह के बलिदान द्वारा उपलब्ध उद्धार–आशिष का तिरस्कार करना है। ख़तना अथवा यहूदी व्यवस्था की अन्य किसी रीति–विधि को पूरा करने के द्वारा परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य होने पर भरोसा करने वाले लोगों को यह भी समझ लेना चाहिए कि ऐसा करने के द्वारा वे स्वयं को (मूसा की) व्यवस्था के सारे कामों को पूरा करने के

बंधन में डालते हैं। जो व्यवस्था के कामों के द्वारा परमेश्वर के समक्ष ग्रहणयोग्य बनना चाहते हैं उनके लिए यहूदी व्यवस्था की सम्पूर्ण रीति–विधियों का अचूक पालन करना अनिवार्य है। व्यवस्था का आंशिक पालन व्यवस्था का उल्लंघन है। व्यवस्था के किसी भी अंश को पूरा न करना, व्यवस्था द्वारा दोषी ठहराया जाना है। अतः व्यवस्था–पालन द्वारा धर्मी ठहराए जाना असम्भव है (रोमि0 3:20; गला0 2:16)। इसलिए पौलुस लिखता है कि जो व्यक्ति व्यवस्था के कामों के द्वारा धर्मी ठहराए जाने की कोशिश में है, वह परमेश्वर के अनुग्रह से दूर (वंचित) है। ऐसे व्यक्ति के जीवन में परमेश्वर का अनुग्रह प्रभावकारी नहीं होता।

"क्योंकि पवित्र आत्मा के द्वारा हम विश्वास से उस धार्मिकता की प्रतीक्षा करते हैं जिसकी हमें आशा है। मसीह यीशु में न ख़तने का कुछ महत्व है और न खतनारहित होने का, पर केवल विश्वास का जो प्रेम द्वारा होता है" (गला0 5:5–6)। जब हम प्रभु पर आशा–भरोसा और विश्वास–विश्राम के साथ अर्थात् उस पर विश्वास रखते हुए जीवन बिताते हैं, तब पवित्र आत्मा हमें अधिकाधिक मसीह के स्वरूप में ढालता जाता है, और इस प्रकार मसीह में हमारी स्थापना–आधार के अनुसार हम पवित्र एवं धर्मी जीवन में विकसित होते जाते हैं। **मसीह में** हमारी स्थापना के बाद ख़तना और व्यवस्था–पालन का कोई महत्व नहीं रह जाता। हमारे बदले ख्रीष्त द्वारा पूर्ण किए गये उद्धार–कार्य तथा इसके सम्पूर्ण अभिप्राय पर आशा–भरोसा (विश्वास) ही महत्वपूर्ण है। इस विश्वास के आधार पर वही हमारा (नव) जीवन है। भले कार्य हमें धर्मी और पवित्र नहीं ठहराते; बल्कि जब हम मसीह द्वारा सम्पन्न किए गये उद्धार–कार्य पर भरोसा करते हुए **आत्मा** की अधीनता में जीवन बिताते हैं, तो जैसे–जैसे मसीह के स्वरूप में ढाले जाते हैं, वैसे–वैसे धर्मी और पवित्र जीवन–आचरण में उन्नति करते हैं, और इस प्रकार भले कार्य हमारे जीवन में ख्रीष्त–जीवन के उपोत्पाद (बॉइप्रोडक्ट) हैं।

"तुम तो भली–भांति दौड़ रहे थे। अब सत्य को मानने में किसने बाधा डाल दी? ऐसी सीख तुम्हारे बुलाने वाले की ओर से नहीं" (गला0

5:7–8)। पौलुस ने गलातिया के विश्वासियों को स्मरण दिलाया कि वे स्वयं को उद्धार प्रदान करने की अपनी असमर्थता को भलीभांति पहचानते हुए अपने बदले मसीह के बलिदान पर विश्वास द्वारा उद्धार पाए थे, और इस प्रकार उन्होंने सही शुरुआत की थी। लेकिन अब वे भटक गये थे। अतः पौलुस प्रश्न करता है कि ऐसा क्यों कर हुआ? किसने उन्हें सत्य से एवं मसीह द्वारा पूर्ण किए गये कार्य पर आशा–भरोसा रखने से विचलित कर दिया? किसने उन्हें यह भ्रामक पाठ पढ़ा दिया कि वे व्यवस्था के पूर्ण–पालन में समर्थ हैं? व्यवस्था–पालन द्वारा परमेश्वर को प्रसन्न करने या उसके समक्ष स्वीकार्य होने का अहंकार परमेश्वर की ओर से नहीं है। ऐसी शिक्षा हमें बुलाने व बचाने वाले प्रभु परमेश्वर की ओर से नहीं है; क्योंकि यह शिक्षा परमेश्वर के अनुग्रह रूपी सत्य के विपरीत है (प0 थिस्स0 5:24)। शरीर के अनुसार जीवन–आचरण करने वाले लोग परमेश्वर के अनुग्रह से विमुख होकर अहं–केन्द्रित हो जाते हैं और व्यवस्था–पालन का दिखावा करते हैं।

"थोड़ा सा ख़मीर गूंधे हुए पूरे आटे को ख़मीरा कर देता है" (गला0 5:9)। यूहन्ना के सुसमाचार के तीसरे अध्याय के छठवें पद के अनुसार "जो शरीर से जन्मा है वह शरीर है"। व्यवस्था–पालन के चक्कर में पड़ने पर, गलातिया के विश्वासियों द्वारा इस भ्रामक शिक्षा के उस प्रदेश की सारी कलीसियाओं में फैलने की गम्भीर आशंका थी। शारीरिकता सदैव शारीरिकता को ही पुनरुत्पादित करती (बढ़ाती) है।

"मुझे प्रभु में तुम पर भरोसा है कि तुम किसी अन्य विचारधारा को नहीं अपनाओगे, परन्तु तुम्हें घबरा देने वाला, चाहे वह कोई क्यों न हो, दण्ड भोगेगा" (गला0 5:10)। पौलुस का भरोसा अपने प्रभु परमेश्वर पर था, न कि स्वयं पर। परमेश्वर की विश्वसनीयता पर आशा–भरोसा रखने के कारण उसको यह इत्मीनान था कि परमेश्वर गलातिया के विश्वासियों को पुनः सत्य–पथ पर वापिस लाएगा; और उन्हें भरमाने वालों के साथ समुचित व्यवहार करेगा। हम स्वयं किसी को कुछ मानने या विश्वास करने के लिए मजबूर नहीं कर सकते। परन्तु आत्मा की

अधीनता में जीवन व्यतीत करते हुए प्रभु पर हम यह आशा–भरोसा रख सकते हैं कि लोगों पर वह अपना सत्य प्रकट करेगा। हम तो सत्य की ओर सिर्फ इशारा कर सकते हैं।

"परन्तु हे भाइयों, यदि मैं अब तक ख़तना का प्रचार करता हूं तो क्यों सताया जाता हूं? फिर तो क्रूस के मार्ग पर जो ठोकर थी वह समाप्त हो गई" (गला0 5:11)। शायद वह झूठे शिक्षक यह झूठ भी फैलाने में लगे थे कि पौलुस भी व्यवस्था का प्रचार करने लगा है। इसके जवाब में पौलुस यह कहता है कि यदि वह अभी भी व्यवस्था–पालन का प्रचारक है तो फिर उसे यहूदियों की सतावट क्यों सहनी पड़ रही है? वह तो "क्रूस की कथा" का प्रचार कर रहा था और उसे "क्रूस" के कारण उत्पीड़ित किया जा रहा था। यदि वह क्रूस का प्रचार करना छोड़ दिया होता तब तो उसके विरोध की बात ही नहीं रह जाती। आज भी कलीसिया में "क्रूस" विरोध या संघर्ष का कारण या प्रतीक है। क्रूस, सिर्फ मनुष्य के बदले मसीह की मृत्यु को ही नहीं दर्शाता, बल्कि मसीह के साथ 'मनुष्य' की मृत्यु को भी दर्शाता है (रोमि0 6:6; गला0 2:20)। यह शिक्षा कलीसिया में (आपसी) विरोध या संघर्ष पैदा करती है; क्योंकि इसमें मानवीय सर्वसत्ता को नहीं, बल्कि ईश्वरीय सर्वसत्ता की सर्वोच्चता पर जोर दिया जाता है।

"भला होता कि जो तुम्हें विचलित कर रहे हैं वे स्वयं अपना ही अंग काट डालते" (गला0 5:12)। ख़तना और व्यवस्थाई रीति–विधियों के प्रसंग में पौलुस व्यंगात्मक शैली में यह कहता है कि यदि भ्रामक शिक्षक ख़तना जैसी रीति–विधियों को इतना अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं तो विधर्मी आत्म–पीड़कों की तरह अपना अंग–भंग करके विकलांग क्यों नहीं बन जाते।

9

"हे भाइयों, तुम स्वतंत्र होने के लिए बुलाए गये हो। इस स्वतंत्रता को शारीरिक इच्छा पूर्ण करने का साधन न बनाओ, परन्तु प्रेम से एक दूसरे की सेवा करो। क्योंकि सम्पूर्ण व्यवस्था इस कथन के एक ही शब्द में पूर्ण हो जाती है: 'तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख'"। (गला0 5:13–14)। मसीही जीवन में या तो हम 'शरीर' के अनुसार जीवन बिताते हैं या फिर **आत्मा** के अनुसार। पौलुस द्वारा गलातिया के विश्वासियों को अब तक की बातों के द्वारा यही समझाया गया है कि अब वे व्यवस्था के अधीन नहीं हैं और उन्हें ऐसा जीवन नहीं जीना चाहिए जैसे कि वे अभी भी व्यवस्था–बन्धन में हों। यहां तेरहवें पद में पौलुस यह कहता है कि मसीह के विश्वासी लोग स्वतंत्रता में बुलाए गये हैं। परन्तु इस (मसीही आत्मिक) स्वतंत्रता को शारीरिकता के अनुसार जीवन जीने की छूट नहीं समझना चाहिए। परम प्रधान परमेश्वर के अनुग्रह के बारे में अक्सर लोगों में दो खास गलत धारणाएं दिखायी देती हैं। पहली गलत धारणा यह है कि परमेश्वर के अनुग्रह में होने का मतलब जैसा चाहें वैसा जीवन बिताएं। यहां तेरहवें पद में पौलुस इसी गलत विचार के बारे में लिख रहा है। दूसरी गलत धारणा यह पाई जाती है कि परमेश्वर के अनुग्रह के अधीन होने का मतलब लापरवाही भरा, सुस्त व निष्क्रिय मसीही जीवन जीना। अनुग्रह के संदेश का प्रारम्भिक शिक्षक (पौलुस) पहला कुरिन्थियों की पुस्तक के पन्द्रहवें अध्याय के दसवें पद में यह कहता है: "मैंने उन सबसे बढ़कर परिश्रम किया, फिर भी मैंने नहीं, परन्तु परमेश्वर के अनुग्रह ने मेरे साथ मिलकर किया"। अब गलातियों की पत्री के पांचवें अध्याय के तेरहवें पद के इन शब्दों पर विचार करें: (मसीही लोग) "प्रेम से एक दूसरे की सेवा करो"। इन सब बातों का

सार–तत्व यह है कि परमेश्वर का अनुग्रह हमें स्वार्थीपन एवं अनुत्पादक जीवन–शैली की ओर ढकेलने के बजाय एक–दूसरे से प्रेम रखने और एक–दूसरे की सेवा करने की सामर्थ्य प्रदान करता है।

"परन्तु यदि तुम एक दूसरे को दांत से काटते और फाड़ खाते हो तो सावधान रहो कि कहीं एक दूसरे का सर्वनाश न कर दो" (गला0 5:15)। व्यवस्था के अधीन जीवन जीने वाला विश्वासी शारीरिकता के चलाए चलता है, और शरीर के काम ईर्ष्या–द्वेष, बैर, झगड़ा, क्रोध एवं विभाजन इत्यादि को बढ़ावा देते हैं। अतः शारीरिकता के बल पर व्यवस्था–पालन की कोशिश सिर्फ ऐसे शारीरिक दुर्गुणों को ही बढ़ावा देगी। नतीजतन, एकता व मेल–मिलाप के बजाय आपसी कड़वाहट, निराशा और फूट की ही बढ़त होगी।

"परन्तु मैं कहता हूँ कि पवित्र आत्मा के अनुसार चलो तो तुम शारीरिक इच्छाओं को किसी रीति से पूर्ण नहीं करोगे" (गला0 5:16)। इस बाइबल–पद से स्पष्ट है कि पवित्र आत्मा के चलाए चलने वाले शारीरिक अभिलाषाओं के अनुसार नहीं जीते। आध्यात्मिक मसीही जीवन के प्रसंग में यह बाइबॅल–पद अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसे व्यवहारिक मसीही जीवन का आधार भी कहा जा सकता है।

"क्योंकि शरीर तो पवित्र आत्मा के विरोध में लालसा करता है। ये तो एक दूसरे के विरोधी हैं, कि जो तुम करना चाहते हो उसे न कर सको" (गला0 5:17)। यहां प्रत्येक नया जीवन पाए विश्वासी के अन्तरात्मा में होने वाले संघर्ष या अर्न्तद्वन्द का उल्लेख है: "शरीर तो पवित्र आत्मा के विरोध" का अभिलाषी है (रोमि0 7:23)। परन्तु प्रश्न यह है कि वे किस लिए एक दूसरे का विरोध कर रहे हैं? विश्वासी जन के प्राण (मन, इच्छा व मनोवेग) पर प्रभाव–नियंत्रण के लिए। यदि मेरे मन, इच्छा एवं मनोवेग पर शारीरिकता का प्रभाव–नियंत्रण होगा, तो वह मेरी

देह एवं इसके कार्य–व्यवहार को चलाएगा (कहां जाएं, क्या देखें, क्या सुनें, क्या कहें, इत्यादि)। बहरहाल, इसका उल्टा भी सच है, अर्थात् जब पवित्र आत्मा हमारे प्राण (मन, इच्छा, भावना) को प्रभावित या नियंत्रित करता है। अतः यह नहीं भूलना चाहिए कि जैसे पवित्र आत्मा के चलाए चलने पर शारीरिक अभिलाषाओं को पूरा करना असंभव है; उसी प्रकार शारीरिकता के चलाए चलने पर पवित्र आत्मा के फल असंभव हैं। बेशक, यह आंतरिक संघर्ष चल रहा है; लेकिन सुखद संदेश यह है कि यह आत्मिक संघर्ष हमारा नहीं बल्कि सर्वसत्ता–संपन्न प्रभु परमेश्वर का (अर्थात् उसी के अधीन) है। हमारी भूमिका इस सत्य पर विश्वास करने की है कि हमारा शरीर अर्थात् पुराना मनुष्यत्व (परमेश्वर की दृष्टि में) मसीह के साथ क्रूसित हो चुका है (रोमि0 6:6)। जब परमेश्वर के वचन की इस सच्चाई पर हम विश्वास–विश्राम करते हैं, तब पवित्र आत्मा हमारी शारीरिकता को मृत्यु–स्थल पर ही रखता है और हमारे जीवन पर **आत्मा** का नियंत्रण–प्रभाव बना रहता है।

"परन्तु यदि तुम पवित्र आत्मा के चलाए चलते हो, तो व्यवस्था के अधीन न रहे" (गला0 5:18)। जैसा कि इससे पहले भी कहा जा चुका है कि जब हम मसीह के साथ अपने पुराने मनुष्यत्व के सह–क्रूसित होने की सच्चाई में विश्वास–विश्राम करते हैं और हमारे प्राण अर्थात्, मन, इच्छा व भावना पर पवित्र आत्मा का प्रभाव–नियंत्रण होता है, तब हम व्यवस्था की अधीनता में जीने की चाहत से मुक्त रहते हैं। इसके विपरीत, जब हम शारीरिकता के अनुसार जीवन बिताते हैं, तब व्यवस्था के अधीन जीवन व्यतीत करते हैं, जिसका परिणाम स्वयं को दोषी ठहराना होता है; क्योंकि कोई भी मनुष्य व्यवस्था का पूर्णरूपेण पालन नहीं कर सकता।

"अब शरीर के काम स्पष्ट हैं, अर्थात् व्यभिचार, अशुद्धता, कामुकता, मूर्तिपूजा, जादू–टोना, बैर, झगड़ा, ईर्ष्या, क्रोध, मतभेद,

फूट, दलबन्दी, द्वेष, मतवालापन, रंगरेलियां तथा इस प्रकार के अन्य काम हैं जिनके विषय में मैं तुम को चेतावनी देता हूं – कि ऐसे ऐसे काम करने वाले तो परमेश्वर के राज्य के उत्तराधिकारी न होंगे" (गला0 5:19–21)। जानवर क्रिया–प्रतिक्रिया के बारे में सोच–विचार नहीं करते, वे अपने (जन्मजात्) स्वभाव के अनुसार कार्य–व्यवहार करते हैं। हमारी शारीरिकता के बारे में भी यही बात सच है। उन्नीसवें–बीसवें पद में पौलुस ने हमारी जन्मजात् शारीरिकता (पुराने आदम स्वभाव) के कामों की सूची दी है। हमारी शारीरिकता प्रमुखतः स्व–संरक्षण, अहम्मान, स्व–संतुष्टि जैसे स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों को पूरा करने में लगी रहती है – अपनी बड़ाई, अपना सम्मान, अपनी सुख–सुविधा और अपनी नाम कमाई इत्यादि। इन सबका सार–तत्व एक ही है – स्व–संरक्षण (स्वार्थ–सिद्धि)। यहां तक कि शारीरिकता में किए जाने वाले आत्मिक व पवित्र दिखते कामों के पीछे भी यही स्वार्थी नीयत–भावना पाई जाती है – अपनी बड़ाई, अपना सम्मान (स्वार्थ–सिद्धि)। इसीलिए ऐसे दिखावटी कार्य परमेश्वर के समक्ष अस्वीकार्य हैं।

"परन्तु पवित्र आत्मा का फल प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, दयालुता, भलाई, विश्वस्तता, नम्रता व संयम हैं। ऐसे कामों के विरुद्ध कोई व्यवस्था नहीं है" (गला0 5: 22–23)। इस प्रकार शारीरिकता अपने स्वभाव के अनुसार काम करती है, और पवित्र आत्मा अपने स्वभाव के अनुरूप कार्य करता है (रोमि0 8:5)। रोचक है कि बहुत से लोग यह सोचते हैं कि यहां बाईसवें – तेईसवें पद में पवित्र आत्मा के फलों के लिए हमें कोशिश करना है, प्रार्थना करना है और इनके लिए प्रयत्नशील होना है। परन्तु पौलुस तो सिर्फ वास्तविक सत्य को लिख रहा है – अर्थात् हमारे जीवन के आधार–स्त्रोत (या तो शारीरिकता या फिर पवित्र आत्मा) के अनुसार ही हमारा कार्य–व्यवहार (फल या आचरण) होगा। जब हम शारीरिकता के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं तो हमारे प्राण

(मन, इच्छा, भावना) एवं देह (कार्य–व्यवहार) पर शारीरिकता का प्रभाव–नियंत्रण रहता है और हम "शरीर के काम" करते हैं। परन्तु जब हम विश्वास द्वारा **आत्मा** की अधीनता में जीते हैं तो हमारे प्राण एवं देह पर पवित्र आत्मा का प्रभाव–नियंत्रण रहता है और हमारे कार्य–व्यवहार से पवित्र आत्मा के फल प्रकट होते हैं।

"और जो मसीह यीशु के हैं, उन्होंने अपने शरीर को दुर्वासनाओं तथा लालसाओं समेत क्रूस पर चढ़ा दिया है। यदि हम पवित्र आत्मा के द्वारा जीवित हैं तो हम पवित्र आत्मा के अनुसार चलें भी। हम अहंकारी न बनें, एक दूसरे को न छेड़ें, और न ही डाह रखें" (गला0 5:24–26)। "जो मसीह यीशु के हैं" वाक्यांश का इशारा सिर्फ उद्धार–प्राप्ति की ओर नहीं, बल्कि आध्यात्मिक मसीहियों की ओर है – अर्थात् ऐसे आत्मिक विश्वासी जो मसीह के साथ अपने पुराने मनुष्यत्व के सह–क्रूसित होने की सच्चाई पर विश्वास करते हुए जीवन व्यतीत कर रहे हैं और पवित्र आत्मा उनके प्राण (मन, इच्छा, भावना) को मसीह की ओर आकर्षित कर रहा है। ऐसे विश्वासी मसीह में लवलीन, मसीह में स्थिर, मसीह में सम्मोहित होकर उसी की ओर देखते (मन लगाए) रहते हैं। जब हम विश्वास द्वारा इन सच्चाईयों के अनुसार जीवन जीना सीखते हैं, तब शारीरिकता की अधिकार–सत्ता से स्वतंत्रता में पवित्र आत्मा के चलाए जीवन जीना सीखते हैं। तब हम 'अहंकार में, एक दूसरे को छेड़ते हुए' ईर्ष्या–द्वेष नहीं करते हैं। मसीह के ऐसे दास "शरीर की दुर्वासनाओं तथा लालसाओं" के प्रति मृतक जैसा जीवन जीते हैं।

10

गलातियों की पुस्तक के आखिरी अध्याय में पौलुस ने मसीही जीवन–निर्वाह के बारे में कुछ निर्देश दिये हैं। इन निर्देशों पर विचार करते समय हमें गलातियों की पत्री के इससे पूर्व के अध्यायों की प्रमुख बातों को स्मरण रखना जरूरी है। जैसा कि इससे पहले के पृष्ठों में हमने देखा कि मसीही जीवन को संक्षेप में इन शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है: या तो शारीरिकता के अधीन जीना या फिर पवित्र आत्मा के अधीन जीना। शारीरिकता के अधीन जीवन–निर्वाह करने पर हमारे जीवन–आचरण से "शरीर के काम" प्रकट होंगे। परन्तु जब हम पवित्र आत्मा के अधीन जीवन बितायेंगे तो "पवित्र आत्मा के फल" प्रकट होंगे और तब हम वैसा जीवन व्यतीत कर सकेंगे जिसका गलातियों की पत्री के छठवें अध्याय में उल्लेख किया गया है। इस पाठ में छठवें अध्याय पर विचार किया गया है। कई लोग इस पत्री के अध्ययन के समय इसके पांचवे अध्याय की सच्चाईयों को ठीक से समझे बगैर छठवें अध्याय के निर्देशों में आगे बढ़ने लगते हैं और इस प्रकार छठवें अध्याय के मसीही आचरण को अपनी शारीरिकता में जीने की असफल कोशिश करते हैं। ऐसी शारीरिकतापूर्ण कोशिश हताशा, निराशा एवं दोष–भावना में ही ले जाती है। छठवें अध्याय में वर्णित मसीही जीवन को अपनी कोशिश से जीना असम्भव है।

"हे भाइयों, यदि कोई मनुष्य किसी अपराध में पकड़ा भी जाए तो तुम जो आत्मिक हो नम्रतापूर्वक उसे संभालो, परन्तु सतर्क रहो कि कहीं तुम भी परीक्षा में न पड़ जाओ" (गला0 6:1)। अपनी इस पत्री के

पांचवे अध्याय के सोलहवें पद में पौलुस ने यह सिखाया कि पवित्र आत्मा के अनुसार जीवन व्यतीत करने पर विश्वासी जन शारीरिक इच्छाओं को पूरा नहीं करेगा। बहरहाल, यह जीवन भर सीखते रहने की एक आजीवन प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया–पथ पर (कभी न कभी) हम शारीरिकता में भी होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पाप कर देते हैं। इसलिए पौलुस हमें यह निर्देश देता है कि पाप में गिर जाने वाले के प्रति कैसे पेश आना चाहिए। पौलुस के अनुसार पवित्र आत्मा की अधीनता में जीवन बिताने वाले विश्वासियों को, पाप के रास्ते पर चलने वाले जन के लिए, पवित्र आत्मा के चलाए जीवन में वापिस आने हेतु प्रेरणा–प्रोत्साहन होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, पवित्र आत्मा की अगुवाई के अनुसार, शारीरिकता में जीने वाले विश्वासी के पास जाकर उसके पाप–स्त्रोत अर्थात् पुराने आदम स्वभाव के बारे में तथा मसीह के साथ उस पुराने स्वभाव के सह–क्रूसित होने की सच्चाई को समझाना चाहिए (रोमियों के छठवें अध्याय के आधार पर)। जैसे–जैसे वह व्यक्ति रोमियों की पत्री के छठवें अध्याय की सच्चाई को आत्मसात् करेगा, वैसे–वैसे शारीरिकता की गुलामी वाले जीवन से छूटकर **आत्मा** के अधीन जीना सीखेगा।

"एक दूसरे का भार उठाओ और इस प्रकार मसीह की व्यवस्था को पूर्ण करो" (गला0 6:2)। ऐसा करना तभी सम्भव है जबकि **आत्मा** के चलाए चलें। क्योंकि शारीरिक व्यक्ति सिर्फ अपनी चिन्ता करता है और दूसरों की सेवा–सहायता के बजाय उनकी बुराई व आलोचना ही करता है। परन्तु आत्मा के अधीन जीवन व्यतीत करने पर हम सच्चे ईश्वरीय प्रेम की अनुभूति एवं प्रकटन करते हैं और इस प्रकार अपने (आत्मिक) जीवन में संघर्ष से जूझ रहे लोगों की सेवा–सहायता करने के इच्छुक एवं समर्थ होंगे।

"यदि कोई मनुष्य कुछ न होने पर भी अपने आप को कुछ समझता है तो अपने आप को धोखा देता है" (गला0 6:3)। शारीरिक जीवन की यही कहानी है। ऐसे लोग अपनी तुलना अपने आप से करते हैं और इस प्रकार स्वयं को बहुत 'बड़ा या स्पेशल' समझने लगते हैं। यह अपने आप को धोखा देना है। रोमियों की पत्री के सातवें अध्याय के अट्ठारहवें पद में पौलुस ने यह कहा है: "मुझ में अर्थात् मेरे शरीर में कुछ भी भला वास नहीं करता"। जब हम यह समझने लगते हैं कि परमेश्वर बगैर मनुष्य मात्र में कुछ भी "भला" नहीं है, तब परमेश्वर के अनुग्रह से दूसरों के बारे में सही दृष्टिकोण अपनाना शुरू करते हैं। तब "हम किसी मनुष्य को शरीर के अनुसार न समझेंगे" (दू0 कुरि0 5:16)। अतः पौलुस यह कहता है कि शारीरिकता के अनुसार जीवन जीने वाला व्यक्ति अपने आप को इतना महत्वपूर्ण समझने लगता है कि (अपने अहम्मान के अहंकार में) धोखे में जीवन व्यतीत करता है।

"परन्तु प्रत्येक मनुष्य अपने काम को जांचे – तब उसे दूसरे के विषय में नहीं परन्तु अपने ही विषय में गर्व करने का अवसर मिलेगा" (गला0 6:4)। जब हम विश्वास के द्वारा आत्मा के चलाए जीवन व्यतीत करते हैं तब हमारे जीवन द्वारा ख्रीष्त–जीवन प्रकट होता है और इस प्रकार हमारे जीवन में पवित्र आत्मा द्वारा किया जा रहा कार्य दिखाई देता है। अपने जीवन में ख्रीष्त–जीवन के प्रकटीकरण एवं विकास से हमें आनन्दित होने का अवसर मिलता है – अपने किसी कर्म–प्रयास पर घमंड का अवसर नहीं बल्कि हमारे जीवन में प्रभु के काम पर गर्व करने या प्रफुल्लित होने का अवसर। यह 'गर्व करना' प्रभु द्वारा किए जा रहे आत्मिक काम के बारे में होगा, न कि हमारे शारीरिकता का परिणाम, जो कि हमेशा अपने द्वारा किए गये कामों को दूसरों की तुलना में बेहतर दिखाने की ताक में रहता है।

"क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपना ही बोझ उठाएगा" (गला0 6:5)। शरीर के अनुसार जीवन बिताना दुखदायी, निराशाजनक, तनावपूर्ण, कठिनाईपूर्ण तथा बोझिल जीवन होता है। इसके विपरीत, पिता परमेश्वर ने धर्मी एवं ईश्वरपरायण जीवन व्यतीत करने के लिए समस्त आवश्यक प्राविधान (उपाय) कर दिए हैं (दू0 पत0 1:3; प0 थिस्स0 5:24)।

"जो वचन की शिक्षा पा रहा है, वह अपने शिक्षक को सभी उत्तम वस्तुओं में साझी बनाए। धोखा न खाओ: परमेश्वर ठट्ठो में नहीं उड़ाया जाता, क्योंकि जैसा बोओगे वैसा ही काटोगे। क्योंकि जो अपने शरीर के लिए बोता है, वह शरीर के द्वारा विनाश की कटनी काटेगा; परन्तु जो पवित्र आत्मा के लिए बोता है, वह पवित्र आत्मा के द्वारा अनन्त जीवन की कटनी काटेगा" (गला0 6:6–8)। ध्यान दें कि पौलुस यहां फिर आत्मा अथवा शरीर के अनुसार जीवन व्यतीत करने की बात करता है। आत्मा के अधीन जीने वाला व्यक्ति किसी दूसरे विश्वासीजन से सत्य–शिक्षा पाने पर प्रोत्साहित होगा और इससे परमेश्वर के प्रति आभारी मन से, शिक्षा देने में परमेश्वर द्वारा इस्तेमाल किए गये लोगों की (भौतिक) सहायता करना चाहेगा। इसके विपरीत शरीर के अनुसार जीने वाला व्यक्ति सिर्फ अपने बारे में और सिर्फ अपने इस अस्थाई पार्थिव जीवन के बारे में ही सोचता रहता है। ऐसा जन दूसरों से प्राप्त सत्य–शिक्षा और उनकी सेवकाई के बारे में नहीं सोचता और न ही उनकी मदद करना चाहता है। अतः पौलुस ने गलातिया के विश्वासियों को चेतावनी दिया कि वे धोखे में न रहें। परमेश्वर को धोखा नहीं दिया जा सकता। शरीर के अनुसार जीने वाले विश्वासी शारीरिकता की ही कटनी काटेंगे, जिसका कोई शाश्वत् मूल्य नहीं। परन्तु आत्मा के अधीन जीवन व्यतीत करने वाले अनन्तकालीन आत्मिक कटनी (फसल) काटेंगे।

"हम भलाई करने में निरुत्साहित न हों, क्योंकि यदि हम शिथिल न पड़ें तो उचित समय पर कटनी काटेंगे। इसलिए जहां तक अवसर मिले सब के साथ भलाई करें, विशेषकर विश्वासी भाइयों के साथ" (गला0 6:9–10)। शरीर के अनुसार जीने पर भलाई के कामों को भी हम अपने स्वार्थ के लिए ही करेंगे। इसके विपरीत, आत्मा के अनुसार जीने पर हमारे कामों की नियत–भावना मसीह के प्रेम पर आधारित होगी। चूंकि **प्रेम** पवित्र आत्मा के कार्य का फल है, इसलिए आत्मा के अनुसार जीने पर यह स्वभावतः हमारे जीवन–व्यवहार से प्रकट होगा। संभवतः परमेश्वर के प्रेम की प्रेरणा द्वारा किए गये अपने भले कामों के फल को हम तत्काल तो नहीं देख सकेंगे। लेकिन पौलुस कहता है कि पवित्र आत्मा के अनुसार जीवन बिताते हुए हमें ऐसे भले कार्यों को करते रहना है और (तत्काल नहीं तो) एक दिन ऐसा आएगा कि पिता परमेश्वर ऐसे भले कामों को अपनी कलीसिया के निर्माण में इस्तेमाल करेगा। अतः आत्मिक जन सब के प्रति भलाई करने के अवसर का सदुपयोग करता है, खासकर मसीही भाई–बहिनों के प्रति। ऐसे भले कार्य–व्यवहार को प्रभु परमेश्वर अपनी महिमा के लिए और हमारी भलाई के लिए भी इस्तेमाल करेगा।

"देखो, मैं कैसे बड़े–बड़े अक्षरों में अपने ही हाथों से तुम्हें लिख रहा हूं। जो लोग शारीरिक दिखावा चाहते हैं वे ही तुम्हारा ख़तना करवाने पर तुले हुए हैं, केवल इसलिए कि मसीह के क्रूस के कारण उन्हें अत्याचार न सहना पड़े, क्योंकि जिनका ख़तना हो चुका है वे स्वयं तो व्यवस्था पर नहीं चलते, परन्तु तुम्हारा ख़तना इसलिए कराना चाहते हैं कि तुम्हारी शारीरिक दशा पर घमंड करें" (गला0 6:11–13)। अपनी इस पत्री की अंतिम पंक्तियों में पौलुस पुनः उन झूठे शिक्षकों का ज़िक्र करता है जिनका उसने इससे पहले भी उल्लेख किया था। यहूदी रीति–रिवाजों

का दिखावा करने वाले शिक्षक कलीसिया को सताने वाले यहूदियों को खुश करने के लिए **ख़तना** पर जोर दे रहे थे। पौलुस कहता है कि ख़तना कराए हुए ये झूठे शिक्षक स्वयं मूसा की व्यवस्था का पालन नहीं करते, लेकिन गैरयहूदियों को ख़तना कराने पर विवश करके यहूदी समाज में अपनी नाम–कमाई व दिखावा करना चाह रहे हैं।

"परन्तु ऐसा कभी न हो कि मैं किसी अन्य बात पर गर्व करूं, सिवाय प्रभु यीशु मसीह के क्रूस के, जिसके द्वारा संसार मेरी दृष्टि में क्रूस पर चढ़ाया जा चुका है, और मैं संसार की दृष्टि में। क्योंकि न तो खतने का कुछ महत्व है और न ख़तनारहित होने का, परन्तु नई सृष्टि का" (गला0 6:14–15)। ये भ्रामक शिक्षक तथा अन्य यहूदी लोग व्यवस्था–पालन के प्रयास द्वारा परमेश्वर तथा मनुष्य की प्रशंसा एवं स्वीकार्यता कमाना चाहते थे। इसके विपरीत, चौदहवें पद में पौलुस की बात पर ध्यान दें। क्रूस पर मसीह द्वारा हमारे बदले पूर्ण किए गये कार्य (अर्थात् मसीह के क्रूस) के अलावा अन्य किसी बात पर पौलुस ने घमंड नहीं किया। इतना ही नहीं, वह यह भी कहता है कि मसीह के साथ सह–क्रूसित होने के कारण संसार हमारे प्रति क्रूसित हो चुका है और हम संसार के प्रति। तात्पर्य यह है कि आत्मिक विकास की ओर अग्रसर मसीही विश्वासी में संसारिकता की भूख–प्यास मिटती जाती हैं और ऐसे जन पर संसार का अधिकार नहीं चलता। हमारे आध्यात्मिक एवं ईश्वरपरायण जीवन के लिए क्रूस पर मसीह द्वारा सम्पन्न कार्य द्वारा सारे आवश्यक उपाय कर दिए गये हैं (दू0 पत0 1:3)। हमारे बदले मरने के द्वारा मसीह यीशु ने हमें पाप के दोष–दंड से छुटकारा प्रदान किया। आध्यात्मिक मायने में उसकी मृत्यु, दफन एवं पुनरुत्थान के साथ हमारी पहचान एवं एकत्व के कारण हम पाप (और शारीरिकता) के अधिकार–अधीनता से भी मुक्त कर दिए गये हैं। अतएव पौलुस अपने

पत्री का समापन करते हुए यह कहता है कि अब हम एक "नई सृष्टि" हैं (दू0 कुरि0 5:17)। अब हमारे मसीही जीवन–आचरण और अनन्त मंजिल पर खतना कराने या न कराने का कोई महत्व नहीं।

"जितने इस नियम पर चलें उन पर और परमेश्वर के इस्राएल पर शांति तथा दया होती रहे" (गला0 6:16)। परमेश्वर की शांति और उसकी दया का सच्चा अनुभव सिर्फ वही पाते हैं जो अपने उद्धार एवं पवित्रीकरण के लिए मसीह यीशु द्वारा पूर्ण किए गये महाकार्य पर आशा–भरोसा रखते हुए जीवन व्यतीत करते हैं। अन्य किसी चीज के भरोसे आध्यात्मिक जीवन जीना व्यवस्था के सहारे जीना है; और व्यवस्था द्वारा कोई भी मनुष्य सच्ची ईश्वरीय शांति एवं दया नहीं पा सकता।

"अब से मुझे कोई दुख न दे, क्योंकि मैं यीशु के दागों को अपने शरीर में लिए फिरता हूं। हे भाइयों, हमारे प्रभु यीशु मसीह का अनुग्रह तुम्हारी आत्मा के साथ रहे। आमीन" (गला0 6:17–18)। भ्रामक शिक्षक तथा अन्य यहूदी लोग ख़तना–चिन्ह पर घमंड करते थे, क्योंकि वे यह सोचते थे कि ख़तने के द्वारा वे परमेश्वर के दरबार के हकदार हो जाते हैं। पौलुस कहता है कि वह अपनी देह में मसीह यीशु के दाग लिए फिरता है – प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास के कारण मारे–पीटे जाने के चिन्ह।

इस श्रंखला की पुस्तकों का निम्नलिखित क्रम में अध्ययन ज्यादा लाभप्रद होगा :

1. परमेश्वर-कृत उद्धार
2. प्रेरितों के कार्य
3. वह मुझमें और मैं उसमें
4. रोमियों
5. इफिसियों
6. पहला कुरिन्थियों
7. पहला तीमुथियुस
8. तीतुस
9. पहला और दूसरा थिस्सलुनीकियों
10. प्रकाशितवाक्य
11. गलातियों
12. कुलुस्सियों